ग्रामदान
प्रचार, प्राप्ति और पुष्टि

ग्रामदान-गोष्ठी

१९, २०, २१, २२, २३ अप्रैल १९६६

सर्व सेवा संघ, वाराणसी

संक्षिप्त प्रतिवेदन

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

अपनी ओर से

पिछले अप्रैल में वाराणसी में जो ग्रामदान-गोष्ठी हुई, उसमें ग्रामदान के कई पहलुओं पर गम्भीर और विस्तृत चर्चाएँ हुईं। सबने महसूस किया कि ग्रामदान जिस क्रान्ति की बात कहता है, उसका 'चित्र' जनता के सामने स्पष्ट भाषा में रखना चाहिए, और उस 'चित्र' की भूमिका में ग्रामदान के बाद विकास की जो दिशा है उसे भी तय कर लेना चाहिए। ये दोनों काम गोष्ठी में बहुत कुछ हुए। यों तो ग्रामदान-मूलक क्रान्ति के नये रूप बराबर निखरते जा रहे हैं, और उसकी समस्याएँ और सम्भावनाएँ तेजी से प्रकट हो रही हैं। इसलिए और भी ज्यादा जरूरी है कि ग्रामदान पर चिन्तन का प्रवाह रुकने न पाये और उसके लिए सामग्री बराबर मिलती रहे। यही सोचकर हम गोष्ठी की रिपोर्ट मात्र न निकालकर एक पुस्तक ही प्रकाशित कर रहे हैं।

आज दुनिया में गांधी-विचार को आधार मानकर दो ही जन-आन्दोलन चल रहे हैं—एक अमेरिका में नीग्रो-आन्दोलन और दूसरा भारत में ग्रामदान-आन्दोलन। ये दोनों मनुष्यों के समाज में मनुष्यता की स्थापना के आन्दोलन हैं, इसलिए इनका विश्व-रूप है। इनकी भूमिका में कोई संकीर्ण 'आइडियालाजी' नहीं है, बल्कि हैं जीवन के शाश्वत मूल्य—जिनकी कल्पना मनुष्य ने सदियों पहले की, जिनकी योजना गांधीजी छोड़ गये और अब जिनकी साधना—सामाजिक साधना—करने का गौरव हम कार्यकर्ताओं को प्राप्त हुआ है।

यह पुस्तक हमें इतिहास के प्रवाह के साथ जोड़ने में सहायक होगी। हमारा सुझाव है कि हर कार्यकर्ता और इस क्रान्ति में रुचि रखनेवाला हर नागरिक इस छोटी पुस्तक की एक प्रति अपने पास जरूर रखे।

इस ग्रामदान-गोष्ठी का आयोजन और संचालन भाई राममूर्ति ने किया है। इस मार्गदर्शिका को तैयार करने का श्रेय भी उन्हींको है। इसके लिए मैं उनको और उनके साथियों के प्रति—जिन्होंने इस काम में उनकी मदद की है, संघ की ओर से कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

—राधाकृष्ण
मन्त्री
सर्व सेवा संघ

अनुक्रम

पृष्ठभूमि

'भारत छोडो'—आन्दोलन के समय आचार्य कृपालानी ने बापू से कहा था "अगर खादी-कार्यकर्ता आन्दोलन मे लगते हैं तो यह लाखो रुपये की पूँजी से चल रहा खादी का काम चौपट हो जायगा, सारा सगठन बिखर जायगा ।" बापू का जवाब था "जला डालो सूत और कपडे अगर जरूरत पडे तो ! यह आखिरी लडाई है । करो या मरो !"

यह बात सन् १९४२ की है। आज १९६६ मे विनोबा भी उसी तीव्रता से कह रहे हैं—"हमारे अन्तर की अग्नि प्रज्वलित होनी चाहिए । दूसरी मामूली सेवा वगैरह अभी नही, इस वक्त नहीं । इस वक्त क्रान्ति, भूमि-क्रान्ति चाहिए ।"

विनोबा जिस क्रान्ति की इतनी तीव्रता महसूस कर रहे है, उसके वाहको के लिए उन्होने कहा है—"कार्यकर्ता विचार के प्रतिनिधि है । वे जहाँ-जहाँ जायेंगे, अग्नि के समान जायेंगे । अग्नि लगायी जाती है, तो जगल के जगल साफ हो जाते है । हमारे कार्यकर्ताओ का ऐसी अग्नि के समान प्रवेश होना चाहिए ।"

हम कार्यकर्ता जिस विचार के प्रतिनिधि है, विनोबा के ही शब्दो में वह 'सर्वोदय विचार जीवन की एक स्वयपूर्ण और विधायक दृष्टि' है, जिसका प्रारम्भ-बिन्दु ग्रामदान है । इस ग्रामदान-मूलक क्रान्ति की पूरी 'इमेज' हमारे सामने स्पष्ट होनी चाहिए, और इससे भी आगे हमारे अन्दर उस क्षमता का विकास होना चाहिए, जिससे हम इस क्रान्ति की 'इमेज' को जनसाधारण तक पहुँचा सकें ।

चाण्डिल सर्वोदय-सम्मेलन (१९५३) में विनोबा ने कहा था—"हमें

तीसरी शक्ति खड़ी करनी है। तीसरी शक्ति का मतलब आज दुनिया की परिभाषा में यह होता है कि जो शक्ति न अमेरिका के 'ब्लाक' में पड़ती है, न रूस के 'ब्लाक' में। उसको लोग तीसरी शक्ति कहते हैं। लेकिन मेरी तो तीसरी शक्ति की परिभाषा होगी - जो शक्ति हिंसा की विरोधी है, अर्थात् जो हिंसा की शक्ति नहीं है, और जो दण्ड-शक्ति से भिन्न है, अर्थात् जो दण्ड-शक्ति नहीं है। ऐसी जो शक्ति है उसका नाम है तीसरी शक्ति।" उस तीसरी शक्ति का उद्घोष करते हुए विनोबा ने उसी सम्मेलन में कहा था कि "हमें स्वतन्त्र लोकशक्ति निर्माण करनी चाहिए—हिंसा-शक्ति की विरोधी और दण्ड-शक्ति से भिन्न।"

इसी लोक-शक्ति के निर्माण के लिए त्रिविध कार्यक्रम को तूफान की गति दी जा रही है। लेकिन इतना स्पष्ट है कि त्रिविध कार्यक्रम मूलत विचार-क्रान्ति की ही एक योजना है। और इस विचार-क्रान्ति की प्रक्रिया लोक-शिक्षण की है। निश्चित रूप से किसी प्रकार के शिक्षण की प्रक्रिया दूसरो पर कोई विचार, कल्पना, योजना या और कुछ भी, जबरदस्ती लादने की प्रक्रिया नहीं है। बल्कि वह एक पारस्परिक विनिमय की प्रक्रिया है, जिसके लिए सामनेवाले की भावना, उलझन, सकोच और झिझक को समझना, उसकी ऊँचाई-निचाई, गहराई-उथलेपन को जानना, पहचानना आवश्यक है। हमारा विचार सामनेवाले के अन्तर को स्पर्श करे, इसके लिए आवश्यक है कि अल्पकालीन ही सही, हमारा उसका एक पारस्परिकता का भाव-सम्बन्ध स्थापित हो। तभी, जैसा कि विनोबा का कहना है, हम विचार के आधार पर खड़े हो सकते हैं, और वह 'शिव-शक्ति' पैदा कर सकते हैं, जो हमें पैदा करनी है।

इसके लिए विचार-प्रचार का अटूट उत्साह और विचार-शक्ति पर जागृत निष्ठा हमारे अन्दर पैदा होनी चाहिए, क्योंकि जितना ही अधिक विचार फैलेगा, हमारा काम उतनी ही अधिक सफलता की मजिलें तय करेगा।

विचार की स्पष्टता के अभाव में हम अक्सर फुटकर कामो में फँसते

रहते है और घटना-विशेष से प्रभावित होकर धैर्य खोते रहते हैं। कभी-कभी तो हम भूल जाते हैं कि हमारा लक्ष्य है 'सम्पूर्ण-क्रान्ति' (टोटल रेवोल्यूशन)। हम आज की सम्पूर्ण सामाजिक रचना ही बदलना चाहते है। विनोबा कहते हैं—"आँखें खोलते ही चारो ओर अन्याय ही अन्याय दिखाई दे रहा है। रचनात्मक क्षेत्र से लेकर राजनीतिक क्षेत्र तक और गद्दी से लेकर खादी तक। मेरी अपनी दृष्टि यह है कि छोटे-छोटे कामो में व्यर्थ शक्ति खर्च नही करनी चाहिए।" तात्कालिक घटनाओ की विभीषिकाओ से पैदा हुई दया-भावना का जो आवेग हमें अक्सर दिग्भ्रान्त करता रहता है, उस सदर्भ में विनोबा ने एक उदाहरण द्वारा बहुत ही स्पष्ट मार्ग-दर्शन किया है "एक ही युद्ध का एक अग है जख्मी सिपाहियो की सेवा करना। युद्ध की परस्पर-विरोध गति स्पष्ट है। एक क्रूर कार्य है, दूसरा दया का कार्य है। यह हर कोई जानता है। पर उस दयालु हृदय की वह दयालुता और क्रूर हृदय की वह क्रूरता, दोनो मिलकर युद्ध बनता है। ये दोनो युद्ध को बनाये रखनेवाले दो हिस्से हैं। कठोर वैज्ञानिक भाषा में बोलना है तो युद्ध को जब तक हमने कबूल किया है, तब तक चाहे हमने उसमें जख्मी सिपाहियो की सेवा का पेशा लिया है, चाहे सिपाही का पेशा लिया है, हम दोना युद्ध के गुनहगार हैं। जख्मी सिपाहियों की उस सेवा से हिंसा में लज्जत ही पैदा होती है, परन्तु युद्ध की समाप्ति उस दया से नही हो सकती।"

चाहे यह आर्थिक शोषण और दैन्य की विभीषिका हो, साम्प्रदायिक उपद्रवो का ताण्डव हो, राजनैतिक विद्वेष की धधकती हुई ज्वाला हो, राष्ट्रीय-अन्तरराष्ट्रीय अशान्ति हो, सबका मूल कारण यह है कि वर्तमान समाज की पूरी रचना ही हिंसा पर आधारित है। विनोबा के शब्दो में "आज समाज की जो रचना है, उसीमें अन्याय निहित है। उसीके खिलाफ यह ग्रामदान-आन्दोलन है। जब तक समाज की यह रचना नही बदलेगी, तब तक उसमें जो दोष 'इन्हेरेन्ट' (स्वभावगत) है, उनको 'टालरेट' (सहन) भी करना पड सकता है।"

ग्रामदान से प्रारम्भ कर हम सर्वोदय की इस अहिंसक क्रान्ति द्वारा पूरे समाज की गतिशक्ति (डाइनेमिक्स) बदलना चाहते हैं। इसलिए ग्रामदानमूलक क्रान्ति की 'इमेज' कार्यकर्ताओं के सामने, देश के प्रबुद्ध नागरिकों के सामने, और जो इस क्रान्ति में बुनियादी-वाहक हैं, उस करोड़ों-करोड़ ग्रामीण जनता के सामने स्पष्ट होनी चाहिए। इतना ही नहीं, बल्कि इसकी 'इमेज' पूरी दुनिया के सामने आनी चाहिए।

पिछले अप्रैल '६६ की १९, २०, २१, २२, २३ तारीखों को सर्व सेवा संघ के प्रधान कार्यालय—वाराणसी में, ग्रामदान-आन्दोलन के प्रत्यक्ष कार्य में लगे देश के कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं की एक गोष्ठी श्री सिद्धराज ढड्ढा की अध्यक्षता में हुई। कुल आठ बैठकों में जितनी चर्चाएँ हो पायीं, उनसे विचारों की बहुत सफाई हुई। और, इससे सबने जो विचारमय-स्फूर्ति महसूस की, उसके आधार पर ही गोष्ठी ने यह तय किया कि देश के हर प्रान्त में, हर जिले में, और हर ग्रामदानी गाँव में ग्रामदान-मूलक क्रान्ति की 'इमेज' स्पष्ट करने के लिए गोष्ठियाँ आयोजित की जायँ और इस प्रकार एक व्यापक लोक-शिक्षण का कार्यक्रम चलाया जाय। लेकिन फिलहाल प्रथम प्रयास में हर प्रान्त के प्रमुख कार्यकर्ताओं की प्रान्तीय स्तर पर गोष्ठियाँ आयोजित की जायँ। ऐसा सबने सोचा। इन गोष्ठियों का अधिक उपयोग हो, इनसे विचार-शिक्षण हो सके, इस दृष्टि से वाराणसी की ग्रामदान-गोष्ठी के निष्कर्ष संक्षेप में यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं। आन्दोलन बढ़ रहा है। प्रखण्डदान के रूप में उसका नया चित्र सामने आया है। सामने और बहुत-कुछ दिखायी दे रहा है। नयी सम्भावनाएँ और सम्भावनाओं के साथ नयी समस्याएँ प्रकट हो रही हैं। हम सम्भावनाओं का लाभ ले सकें और समस्याओं को हल कर सकें, इसलिए बार-बार मिलने और मिलकर सोचने की जरूरत है।

●

ग्रामदान : प्रचार (लोक-शिक्षण)   : १ :

१. ग्रामदान-मूलक क्रान्ति का क्या चित्र (इमेज) जनता के सामने प्रस्तुत किया जाय ?

हर क्रान्ति जनता के सामने भावी समाज-रचना का एक चित्र रखती है। उस चित्र में मनुष्य अपनी समस्याओं का हल, चिन्ताओ से मुक्ति, और आशाओ की पूर्ति देखता है, और देखकर ही कुछ करने को तैयार होता है। इसलिए क्रान्ति के लक्ष्य बिलकुल स्पष्ट होने चाहिए। लक्ष्य दूर और नजदीक, दोनो के होते हैं। दोनो समाज को आगे बढने के लिए प्रेरित करते है।

क. दूर का चित्र (अल्टिमेट इमेज)

(१) सम्पूर्ण मनुष्य के समग्र विकास (डेवलपमेण्ट) की उन्नत भूमिका—विज्ञान के लाभ और लोकतन्त्र के अवसर 'सर्व' के लिए सुलभ करना—नये मानवीय सम्बन्धों के सन्दर्भ में ही साधनो और अवसरो का उपयोग। ग्रामदान से वास्तव में गाँव का 'जन्म'—मानवीय परिस्थिति (ह्यूमन सिचुएशन) का निर्माण—श्रम, बुद्धि और पूंजी के पूर्ण सहयोग की भूमिका।

आज लोक-कल्याण के नाम पर विकास की जो सरकारी या अर्द्ध-सरकारी योजनाएँ चलती हैं, वे समाज की केवल मरहमपट्टी करती हैं। इसलिए जड से किसी समस्या का समाधान नही होता। समाज की बुनियादें तो बदलती ही नही। पिछले वर्षों में अपने देश में जो भी योजनाएँ

चली है, उनसे ऊपर के ही कुछ लोगो को लाभ पहुँचा है । समाज के अधिक लोगो तक भी नही पहुँचा है, 'सर्व' की तो बात ही क्या ? आज के समाज की रचना ही ऐसी है कि कोई भी योजना हो, ऊपर-ऊपर निकल जाती है और नीचे के लोग अछूते रह जाते हैं, क्योकि ये योजनाएँ विकास के लिए आवश्यक मानवीय सन्दर्भ का निर्माण नही करती ।

ग्रामदान से गाँव का नया जन्म होता है । आज गाँव गाँव नही, केवल घरो के समूह हैं । उनमे न ग्राम-भावना है, न एकता, और न कोई आपसदारी । जब ग्रामदान होता है, बीघे मे कट्ठा निकलता है, बालिगो की ग्रामसभा बनती है और सबकी कमाई से ग्रामकोष इकट्ठा होता है, तो गाँव के मालिक-मजदूर-महाजन सब एक दायरे के अन्दर आ जाते हैं, एक सूत्र में बँध जाते हैं । ग्रामसभा में बैठकर सबको सबकी बात सुननी और सोचनी पडती है । एक को दूसरे से अलग करनेवाली दीवालें ढहती हैं, और दिल धीरे धीरे नजदीक आते हैं । इस तरह जब सम्बन्ध नये होते हैं, तो स्वभावत नये साधनो और अवसरो का लाभ सबसे पहले उनको पहुँचाने की चिन्ता होती है, जो सबसे नीचे होते हैं । सामने बैठे हुए दुखी, भूमिहीन मजदूर या दस्तकार को, जो ग्रामसभा का बराबर दर्जे का सदस्य है, छोडकर सब कुछ अपनी जेब में रख लेने की योजना मालिक या महाजन नही बना सकते । इसके विपरीत सब यह महसूस करने लगते हैं कि सबसे सबका भला है, अलग-अलग रहने में सब बारी-बारी दुख के शिकार होंगे । सबकी चिन्ता है तो सबकी चेष्टा होनी चाहिए, और इसी तरह जब सबकी शक्ति लगेगी, तो सबका हित हो सकेगा ।

(२) आज के बन्धनो से मुक्ति—राज्यवाद, पूँजीवाद, सैनिकवाद, सम्प्रदायवाद । राज्य, पूँजी और शस्त्र की शक्तियों को क्रमश लोकशक्ति के अधीन करना और उनके प्रयोग सीमित करना ताकि भविष्य में उनका लोप हो सके और समाज मुक्त, और निरुपाधिक मानवो का भाईचारा बन जाय ।

विचार के आग्रह से जुड जाय, तो वह विज्ञान नही रह जायगा । इसी तरह अगर लोकतन्त्र अहिंसा का आधार छोड दे, तो वह सख्या-तन्त्र बन जायगा, बहुमत अल्पमत का दमन करेगा, और अल्पमत 'विरोधवाद' को अपना धर्म बना लेगा । नतीजा यह होगा कि इस अराजकता में से फौजी तानाशाही का जन्म होगा । निराश जनता विवश होकर त्राण के लिए अपने को सेना के हाथो में सौप देगी ।

विनोबाजी बराबर कहते हैं कि विज्ञान और आत्मज्ञान का मेल होना चाहिए । अगर ऐसा नही होगा तो विज्ञान ने जो शक्तियाँ पैदा की हैं, जो साधन बनाये है, उन्हें लेकर मनुष्य-जाति अपना सर्वनाश कर डालेगी । इसलिए अगर विज्ञान को मनुष्य के अभाव, अज्ञान और अन्याय से मुक्ति का साधन बनाना हो, तो समाज मे अनुकूल मानवीय सम्बन्धो का सन्दर्भ बनाना चाहिए । अगर मनुष्य की बुद्धि किसी सिद्धान्त के नाम पर उत्तेजना, आग्रह और उन्माद की गुलाम बनी रहे, तथा एक मनुष्य और दूसरे मनुष्य के बीच सहकार नही, शत्रुता का सम्बन्ध हो, तो निश्चित रूप से मनुष्य विज्ञान का प्रयोग विनाश के लिए करेगा । ग्रामदान पडोसी को पडोसी के साथ जोडता है, जीविका और जीवन दोनो को सहकारी बनाता है, इसलिए सत्य (विज्ञान) और अहिंसा (लोकतन्त्र) की स्थापना के लिए मानवीय सम्बन्धो का अनुकूल सन्दर्भ तैयार कर देता है, क्योंकि वह मानता है कि मनुष्य-मनुष्य के वास्तविक हित में विरोध है ही नही, विरोध समाज की रचना में है । मनुष्य और मनुष्य के बीच मनुष्य होने के नाते एकता मूलभूत है । मनुष्य 'एक' होकर ही रह सकता है । आज के युग में एकता अस्तित्व का प्रश्न बन गयी है । ग्रामदान की क्रान्ति मनुष्य को मनुष्य से किसी जीवन-दर्शन (आइडियालॉजी) के आधार पर अलग नही करती, वह मूलभूत एकता को समाज-परिवर्तन की शक्ति बनाती है ।

(४) नागरिक की क्रान्ति बनाम गुट का षड्यन्त्र और दल का शासन । लोकतन्त्र और विज्ञान की भूमिका में सघर्ष

मुक्त क्रान्ति—कान्फ्लिक्ट या कन्फ्रन्टेशन नहीं, कन्वर्शन—
उसकी शैक्षणिक प्रक्रिया।

विज्ञान और लोकतन्त्र की भूमिका में क्रान्ति संघर्ष-मुक्त ही सम्भव है। स्वभावतः संघर्ष-मुक्त क्रान्ति की प्रक्रिया षड्यन्त्र या विरोधवाद की न होकर विचार-परिवर्तन की होगी, शिक्षण की होगी। विज्ञान विचार की शक्ति पर खड़ा है और अगर लोकतन्त्र विचार-परिवर्तन पर न विश्वास करे, तो वह टिकेगा कितने दिन?

विज्ञान के युग में संघर्ष का अर्थ है संहार। जितना ही बड़ा संघर्ष उतना ही व्यापक और जल्द संहार। उसी तरह लोकमत पर चलनेवाले लोकतन्त्र का तो संघर्ष से कहीं मेल ही नहीं है। इसलिए अगर विज्ञान और लोकतन्त्र की रक्षा करते हुए क्रान्ति करनी है, तो वह क्रान्ति संघर्ष-मुक्त ही हो सकती है। और, जो क्रान्ति संघर्ष से मुक्त होगी, उसमें षड्यन्त्र आदि के लिए स्थान कहाँ होगा? वह खुली होगी, वह सबकी होगी, उसके पीछे लोक-सम्मति की शक्ति होगी। वह विश्वास रखेगी कि मनुष्य का विचार-परिवर्तन हो सकता है। उसका आधार गुट या दल का समर्थन नहीं होगा, बल्कि होगा लोक की प्रेरणा, लोक का निर्णय। ग्रामदान की क्रान्ति में परिस्थिति की प्रतीति के आधार पर विचार-परिवर्तन, हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया है। ग्रामदान लोकतन्त्र के 'तन्त्र' को गौण मानकर 'लोक' को जगाता है, उसे सशक्त बनाता है। इतना ही नहीं, ग्रामदान का लोकतन्त्र बहुमत से चुने हुए प्रतिनिधियों पर नहीं, स्वयं 'लोक' की सहकार-शक्ति पर भरोसा रखता है। इसलिए ग्रामदान विज्ञान और लोकतन्त्र के युग के अनुरूप क्रान्ति-पद्धति विकसित करने की दिशा में बुनियादी कदम है। युग के साथ-साथ क्रान्ति की पद्धति भी बदलती जाती है। एक जमाना था, जब मुक्ति के लिए राजा की जालिम सत्ता के विरुद्ध खुला युद्ध छेड़ना पड़ता था। फिर षड्यन्त्र और संघर्ष का जमाना आया। रूस का क्रान्तिकारी नेता लेनिन कितना भी चाहता, लेकिन जारशाही के अन्त के लिए षड्यन्त्र और संघर्ष (कान्फ्लिक्ट) के सिवाय

दूसरा करता क्या ? जमाना उससे भी आगे बढा तो गांधीजी का अंग्रेजी राज के मुकाबिले दबाव (कान्फ्रेण्टेशन और प्रेशर) से काम चल गया। अब यह जमाना एक ओर लोकतन्त्र का है, विज्ञान की असीम सम्भावनाओं का है, और दूसरी ओर विश्व संघ का है। ऐसे जमाने में क्रान्ति की वही पद्धति सही होगी, जो लोकतन्त्र और विज्ञान को मानव-कल्याण के लिए बचा ले, फिर भी समाज का परिवर्तन कर दे। वह पद्धति मनाव और शिक्षण (परसुएशन और एजूकेशन) की ही हो सकती है। अब हिंसा और संहार अनुचित भी हैं और अनावश्यक भी। हजारों ग्रामदान और दर्जनों प्रखण्डदान इस बात के प्रमाण हैं कि मनुष्य की चेतना मुक्ति के लिए तैयार है—संघर्षमुक्त क्रान्ति के लिए।

(५) सार्वत्रिक अभय-भावना। 'एलिमिनेशन' की क्रान्ति में भय, लेकिन 'ऐसिमिलेशन' की प्रक्रिया में भय के लिए स्थान नहीं।

ग्रामदान में सार्वत्रिक अभयभावना है। इसमें भय के लिए कहीं स्थान ही नहीं है। इसकी योजना में अभाव, अज्ञान या अन्याय से मुक्ति के लिए व्यक्ति द्वारा व्यक्ति का, जाति द्वारा जाति का, वर्ग द्वारा वर्ग का संहार (एलीमिनेशन) करने की जरूरत नहीं है। प्रश्न है पूरी व्यवस्था बदलने का, और ऐसी रचना करने का जिसमें सबके लिए उचित स्थान हो, लेकिन कोई किसीके सीने पर सवार न हो। आज की व्यवस्था में सभी चिन्तित हैं और मुक्ति चाहते हैं, लेकिन व्यक्ति व्यवस्था के सामने असहाय हो गया है। वह देख रहा है कि अकेले-अकेले वह जीवन की समस्याओं का मुकाबिला नहीं कर सकता। जैसे-जैसे यह प्रतीति व्यापक होती जा रही है, सहकार शक्ति के विकास के लिए ठोस आधार बनता जा रहा है। क्रान्ति का जो विचार मालिक मजदूर को एक दूसरे का दुश्मन मानता था, वह पुराना हो गया। सर्वोदय की क्रान्ति यह मानती है कि सभी व्यक्ति और समुदाय दूषित व्यव[illegible] है। अ[illegible] जाय और अवसर मिले, तो [illegible] आज[illegible] [illegible]पर

उठेगा (विज्ञान के इस युग में मनुष्य ऊपर उठना ही चाहता है, लेकिन सरकार और समाज की रचना उसे उठने नही देती) वह बार-बार उठना चाहता है, और बार बार गिरा दिया जाता है, और जब वह गिर जाता है तो उसका गिरना उसकी नालायकी का प्रमाण बन जाता है, और डण्डे की शक्ति से उसे सुधारने का स्वाँग रचा जाता है। लेकिन भय से क्या गुण-विकास हो सकता है ? और, गुण विकास के बिना मनुष्य मनुष्य बन सकता है ? मनुष्य मनुष्य की सहायता से मनुष्य बनेगा, डण्डे के जोर से नही। पडोसी को पडोसी की शक्ति मिले और दोनो हाथ में हाथ मिलाकर आगे बढे, इसकी बुनियादी योजना ग्रामदान-प्रखण्डदान में है, बल्कि वही उसका आधार है। ग्रामदान केवल सत्ता परिवर्तन नही है, उसमें समाज-परिवर्तन है, चित्त-परिवर्तन है। लेकिन परिवर्तन के लिए किसी व्यक्ति या समुदाय का संहार (एलिमिनेशन) नही है।

(६) जीवन का सगठन सामुद्रिक वर्तुलो में--व्यक्ति और गाँव से लेकर विश्व तक। गाँव 'सहजीवन' की स्वाभाविक इकाई।

आज मनुष्य और मनुष्य के बीच अनेक दीवालें है—धन की, धर्म की, जाति की, सम्प्रदाय की, भाषा की, क्षेत्र की, जन्म की, संस्कृति की, यहाँ तक कि राष्ट्र भी एक जबरदस्त दीवाल ही है जो विश्व-मानव के विश्व-हृदय को ऊपर नही आने दे रही है। एक ही राष्ट्र के अन्दर स्वय सरकार ने तरह-तरह की दीवालें बना दी है। जिला, राज्य, शासक शासित, शिक्षित-अशिक्षित, दल और दल, आदि दीवालें ही तो है, जिनके आपसी टकराव के भँवर मे आदमी पडा हुआ है, और किसी मोहक लेकिन सकुचित नारे के उन्माद मे अपनी पाशविकता का प्रदर्शन करने मे ही अपने जीवन की सार्थकता मानता रहता है।

गाँव जीविका और जीवन की स्वाभाविक इकाई है। इस वर्तुल के भीतर परिवार है, उसके भी भीतर व्यक्ति, जो सबके केन्द्र में है। व्यक्ति-परिवार-गाँव के बाद क्रमश सहकारी समाज में सहकार के वर्तुल बढने

जायेंगे। इसके विपरीत आज समाज के ढांचे में ऊपर से नीचे तक अनेक परतें है, जिनमें एक परत दूसरे के नीचे दबी हुई है।

प्रेम और सहकार के ये वर्तुल समुद्र के वर्तुलो की भाँति होगे, जिनमे छोटा वर्तुल विकसित होकर बडा वर्तुल बनता है, और बनता ही जाता है। छोटा बडे में विलीन होता है, लेकिन छोटे का विनाश नही करता। एक दिन आयेगा जब आज की दमन की दीवाले ढह जायेंगी, और व्यक्ति से विश्व तक इसी तरह के प्रेम-वर्तुलो में समाज सगठित हो जायगा। ग्रामदान जीवन का यही चित्र प्रस्तुत कर रहा है कि व्यक्ति अपनी जगह बना रहे, लेकिन उसकी बुद्धि, उसकी पूंजी, उसकी शक्ति बडे वर्तुल से जुड जाय, और ग्रामसभा के रूप मे गाँव एक प्रेम वर्तुल बन जाय। एक बार गाँव बन गया तो उसके बाद बडे वर्तुलो का बनाना सहज होगा।

विनोबा के शब्दो में "ससार की भावी व्यवस्था में दो ही चीजें हमारे समक्ष रहेगी ग्राम और विश्व। सुविधा के लिए दुनिया के नक्शे पर विभिन्न देशो के नाम चाहे रहेंगे, परन्तु विश्व और ग्राम के बीच अन्य किसी तन्त्र का अस्तित्व नही रहेगा। जीवन के भौतिक पक्ष से सम्बन्ध रखनेवाली सम्पूर्ण सत्ता गाँव में रहेगी। गाँव मे अपने जीवन की व्यवस्था स्वय करने की शक्ति होगी। सम्पूर्ण जगत् के नैतिक विकास और प्रगति की सत्ता विश्व-केन्द्र के हाथो में होगी। राज्य अथवा जिले केवल ग्राम-समाज के प्रतिनिधि रहेंगे। इस प्रकार सम्पूर्ण व्यवस्था का आधार ग्राम होगा और उसके केन्द्र में विश्व-सत्ता होगी। मानव-समाज का सगठन छोटी-छोटी ग्राम-सभाओ के आधार पर होगा। इस ग्राम-समाज में हमें सच्चे भ्रातृभाव के और सच्चे सहयोग के दर्शन होगे। निजी स्वामित्व के लिए उसमें कोई गुँजाइश नही रहेगी।"

(७) ग्रामदान से विश्व-शान्ति—जीविका में शान्ति, जीवन में शान्ति। जनता के नित्य-जीवन में दमन का तन्त्र नहीं। आक्रमण की लिप्सा नहीं, लेकिन प्रहार होने पर शान्तिपूर्ण प्रतिकार, यानी पूर्ण आत्मोत्सर्ग की पूरी तैयारी।

सहकार और प्रेम के ये वर्तुल शान्ति के वर्तुल होंगे—संघर्ष और संहार के नहीं। ये वर्तुल नित्य के जीवन में स्वावलम्बी होंगे, लेकिन परस्परावलम्बन से एक दूसरे को समृद्ध करते रहेंगे। किसी वर्तुल का किसी दूसरे वर्तुल के द्वारा दमन या शोषण नहीं होगा। हर इकाई दूसरी इकाई की पूरक होगी। ग्रामदान से अगर गाँव शान्ति और सहकार की पहली इकाई बन जाय, तो दूसरी इकाइयों का उसी आधार पर क्रमशः विकास होता जायगा, और विश्व-शान्ति के वर्तुल तैयार होते जायेंगे।

ख. तात्कालिक चित्र (इमीडिएट इमेज)

(१) एशिया-अफ्रीका के नये, स्वतन्त्र देशों की स्थिति—प्रचलित पद्धतियों की अपूर्णता। प्रतिरक्षा (डिफेंस), विकास (डेवलपमेण्ट) और लोकतन्त्र (डिमाक्रेसी) के लिए जनता को उसके नित्य के जीवन के स्तर पर संगठित करना—ग्रामदान उस दिशा में सबल कदम और ग्राम-सभा समर्थ माध्यम।

हम देख रहे हैं कि एशिया, अफ्रीका, लैटिन अमेरिका के सदियों के शोषण से जर्जरित देश अपना विकास करना चाहते हैं, और शीघ्र-से-शीघ्र अति विकसित पश्चिमी देशों की बराबरी में आ जाना चाहते हैं। विकास के लिए इन तमाम देशों को पश्चिमी राष्ट्रों की ओर ताकना पड रहा है। उनकी पूँजी के सहारे ही इनके विकास की योजनाएँ चल रही हैं। सुरक्षा के सवाल पर अपनी सैन्यशक्ति बढ़ाने में इन देशों को अपनी लगभग आधी—कहीं-कहीं उससे भी ज्यादा—पूँजी और शक्ति लगानी पड रही है, जिसका परिणाम यह हो रहा है कि इनके विकास की योजना की गति इतनी धीमी है—गलत दिशा का सवाल अलग है—कि उसके कारण आन्तरिक अशान्ति एक स्थायी समस्या हो गयी है। विकास की कौन कहे, जनता की नित्य की आवश्यकताएँ भी नहीं पूरी हो रही हैं, और वह अधीर होकर मुक्ति के लिए नेताओं को छोडकर सेना की ओर देखने लगी है। एक

के बाद दूसरे देश में तानाशाही का कायम होना नेताशाही और नौकरशाही की विफलता का परिणाम है ।

शस्त्र और सैन्यनिष्ठ प्रतिरक्षा, पूंजी-निष्ठ विकास तथा दलनिष्ठ लोकतन्त्र से नये देशों की समस्याएँ हल नहीं हो पा रही हैं । हो भी नहीं सकतीं, क्योंकि अविकसित देशों के पास न अपनी पूँजी है, न अपने शस्त्र । लोकतन्त्र के नाम पर चलनेवाली दलों की राजनीति उन्हें शक्तिशाली बनाने की जगह उनकी एकता और शक्ति को दिनोंदिन खण्डित करती जा रही है । इसलिए इन समस्याओं के हल के लिए तो जनता को उसके नित्य के जीवन-स्तर पर ही संगठित करना होगा । जनता की ही शक्ति समस्याओं का मुकाबिला कर सकती है ।

ग्रामदान उस दिशा में एक सबल कदम है । जब कोई गाँव ग्रामदान की घोषणा करता है, तो उस गाँव के लोग आज जहाँ हैं, वहाँ पड़े रहने की जगह एक नयी दिशा की ओर मुड़ते और आगे कदम बढ़ाते हैं । भूमि की व्यक्तिगत मालिकी का विसर्जन और ग्रामीकरण गाँव को एक संगठित इकाई बनने के लिए बुनियादी आधार प्रस्तुत करता है । सब बालिगों को मिलाकर ग्रामसभा बनती है, जिसमें समूह की शक्ति संगठित होती है । इस क्रम में पूरे राष्ट्र को एक करने की सम्भावना छिपी हुई है । स्पष्ट है कि यदि कोई देश आपसी भेदभाव की दीवारें ढहाकर संगठित हो जाय, तो वह संगठित शक्ति ही वास्तविक प्रतिरक्षा की गारण्टी हो सकती है । इसी तरह विशाल जनता की श्रम शक्ति विकास की सबसे बड़ी पूँजी है, और उसकी एकता लोकतन्त्र का सबसे मजबूत आधार ।

(२) स्वराज्य के बाद अपने देश में कल्याण की शासन-नीति, विरोधवाद की राजनीति, और राहत की सेवा-नीति का भरपूर विकास । समाज की समस्याएँ हल करने में तीनों विफल—तो अब क्या ? एक जन-आन्दोलन की आवश्यकता—ग्रामदान से उसकी पूर्ति । विरोध और संघर्ष

से 'सर्व' का नाश—वर्ग-संघर्ष, जाति-संघर्ष, भाषा और सम्प्रदाय-संघर्ष आदि । समन्वय की क्रान्ति से ही 'सर्व' का उदय ।

स्वराज्य के बाद अपने देश ने कल्याणकारी लोकतन्त्र की स्थापना का लक्ष्य निर्धारित किया, जिसमें आगे चलकर समाजवाद का नारा भी जुड गया । अब हमारा देश लगातार लोकतान्त्रिक समाजवाद का उद्घोष करता जा रहा है । लेकिन वस्तुस्थिति क्या है ? हमारी पचवर्षीय योजनाएँ अब तक हमें कहाँ ले गयी, और आगे कहाँ ले जानेवाली है ?

इन वर्षों में देश में 'लोक' की कोई ताकत नही बन पायी है । 'लोक' का 'तन्त्र' पर नियन्त्रण हो, यह तो दूर का सपना है । वस्तुस्थिति तो यह है कि 'लोक' पगु हो गया है । जनता दिनादिन असहाय और अधिकाधिक राज्याश्रित होती चली जा रही है । विकास और लोक-कल्याण के नाम पर जो कुछ भी किया गया है, उससे न तो जनजीवन की मूल आवश्यकताएँ ही पूरी की जा सकी है, न विषमता ही घटी है, बल्कि विकास-योजनाओ के परिणाम से तो विषमता की खाई और भी चौडी हुई है । सरकार द्वारा केन्द्रित और भारी उद्योगो को ही अधिकाधिक प्रोत्साहन दिये जाने से देश की सम्पत्ति कुछ थोडे से सम्पत्तिवान लोगो के हाथो मे केन्द्रित हुई है या राज्य के नियन्त्रण में गयी है । और, जिस समाजवाद का नारा हम वर्षों से लगा रहे है, उसका समाज निरन्तर दरिद्र होता चला गया है, जिसका प्रमुख कारण है कि आम जनता की शक्ति को सगठित करने, उनके बिखरे हुए जीवन को जोडने का कोई प्रयास ही नही हुआ । लोक-कल्याण लोक की शक्ति के सहयोग के बिना कैसे सम्भव हो सकता था ? और लोक-शक्ति का सहयोग तो तब न प्राप्त होता, जब 'लोक' के जीवन का कोई सहकारी आधार बनता, उसकी एक दूसरे को तोडनेवाली प्रवृत्ति समाप्त होती और लोग एक दूसरे से जुडते ।

कल्याण की शासन-नीति विफल हुई, क्योकि इस कल्याण की प्रक्रिया

और पद्धति में जिस लोक का कल्याण करना था, वही पगु होता गया। लेकिन इसके साथ ही एक दूसरी सकट की परिस्थिति पैदा हुई विरोधवादी राजनीति के कारण।

देश के राजनीतिक दलो की कुल शक्ति दो कामो के लिए सीमित है—(१) चुनाव लडना, और (२) चुनाव में अधिक-से-अधिक मत प्राप्त करने के लिए जनता के क्षोभ को उभाडना और उसका अपने पक्ष के लिए समर्थन प्राप्त करने में इस्तेमाल करना। जाति, धर्म, वर्ग, क्षेत्रीयता आदि की दुहाई देकर गुटबन्दी करना और इस प्रकार जनजीवन के टुकडे-टुकडे करके फिर नित्य नये लुभावने आश्वासन देना कि हमारे दल की सरकार होगी तो जनता के लिए यह करेगी, वह करेगी। राजनीतिक दलो की सत्ताकाक्षा के कारण ही आज देश में एक के बाद दूसरे उपद्रवो और षड्यन्त्रो का जो दुश्चक्र चल रहा है, उसने गृहयुद्ध की स्थिति पैदा कर दी है। राजनीति के नाम पर देश के नेताओ और बुद्धिमान लोगो की कुल बुद्धि देश की एकता को खण्डित करने में ही लगी हुई है। देश गौण हो गया है, दल मुख्य हो गया है, इसीलिए देश दलो के दलदल में बुरी तरह फँस गया है।

सत्ता और राजनीति के विरोधवाद से अलग देश में ऐसे लोग भी है, जो सेवा और राहत का काम कर रहे है। लेकिन एक तो जन-जीवन को क्षीण करनेवाली प्रवृत्तियाँ इतनी सशक्त और तीव्रगतिवाली है कि सेवा और राहत के काम से उस स्थिति में कोई खास प्रभाव नही पड रहा है, दूसरे, कल्याणकारी राज्य के नारे ने जनजीवन को इतना अधिक पगु बना दिया है, राजनीति के विरोधवाद ने उसे इतना अधिक खण्डित कर दिया है कि उसका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व ही नही दिखाई देता। यही कारण है कि सेवा और राहत की प्रवृत्तियो को भी लोकशक्ति का आधार नही मिल रहा है, और वे प्रवृत्तियाँ भी राज्याश्रित ही होती जा रही है। इसीलिए आज सवाल लोक की सेवा का नही है, सवाल है लोक की मुक्ति का—इस नेताशाही, नौकरशाही और विरोधवादी राजनीति से मुक्ति

का। इसलिए आवश्यकता है एक सम्पूर्ण और समग्र जनक्रान्ति की। सम्पूर्ण और समग्र जनक्रान्ति के लिए समाज के आज के ढांचे को बदलना होगा। यह तभी सम्भव होगा जब एक व्यापक जनआन्दोलन हो। ग्रामदान आन्दोलन उसी सम्पूर्ण और समग्र जनक्रान्ति की बुनियाद है—एक व्यापक जनआन्दोलन की शुरुआत है।

ध्यान देने की बात है कि अगर सम्पूर्ण और समग्र क्रान्ति की आवश्यकता है, तो वह वर्ग-संघर्ष, जाति-संघर्ष, भाषा और सम्प्रदायों के संघर्ष से सम्भव नहीं है। विज्ञान की शक्ति ने आज हमें इस जगह पहुँचा दिया है कि वर्गों के संघर्ष से 'सर्व' का नाश होगा, इसलिए अब हम संघर्ष को समाप्त करें और समन्वय की शक्ति विकसित करें। समन्वय की क्रान्ति से ही 'सर्व' का उदय होगा। समन्वय किनका? मालिक की बुद्धि, महाजन की पूँजी और मजदूर के श्रम की शक्तियों का।

वर्गों की हितसाधना के लिए आयोजित संघर्ष वास्तव में हितों की टक्कर मात्र होती है। इसीलिए अब विरोधमूलक दृष्टिकोण बदलना होगा। ग्रामदान से वह नया दृष्टिकोण बनता है जिससे गाँव के लोगों की रचनात्मक वृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है, परस्पर को काटनेवाली प्रवृत्तियाँ, परिस्थितियाँ और मनोवृत्तियाँ समाप्त होती हैं। इसीलिए पूँजीवाद और साम्यवाद से भिन्न यह एक तीसरा मार्ग है—नयी समाज-रचना का। गुटों के षड्यन्त्र और दलों के विरोधवाद से अलग आज की सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति के विरुद्ध जगे हुए समुदाय के विद्रोह की यह नयी प्रक्रिया है ग्रामदान।

(२) अलग-अलग परिवार जीवन की लड़ाई में हार रहे हैं—न पूँजी, न बुद्धि, न शक्ति—सामूहिक पुरुषार्थ के बिना अस्तित्व असम्भव। ग्रामदान से वह सम्भव।

आज की परिस्थिति में अलग-अलग परिवार जीवन-संघर्ष में पराजित हो रहे हैं, क्योंकि उनके सामने जो समस्याएँ हैं, उन समस्याओं के समाधान

के लिए किसी एक परिवार के पास न तो पर्याप्त पूँजी है, न बुद्धि है, और न श्रम की शक्ति है। इसलिए अब अकेले-अकेले अपने अस्तित्व को कायम रखना असम्भव हो गया है। इस युग की समस्याओं के समाधान का एक ही मार्ग है कि बुद्धिवाले, पूंजीवाले, श्रमवाले एक साथ जुड़ जायें, उनकी सहकारी शक्ति बने।

ग्रामदान से जो सामूहिक चेतना पैदा होती है, ग्रामभावना जगती है, उसके आधार पर सहकार की शक्ति संगठित होगी। यह नयी शक्ति ही वर्तमान परिस्थिति को बदलेगी, और नयी रचना की बुनियाद डालेगी।

(४) राष्ट्र की भावनात्मक एकता का प्रश्न—ग्रामदान से एकता का सुदृढ़ आधार—धर्म-निष्ठा, जाति-निष्ठा, वर्ग-निष्ठा, भाषा-निष्ठा आदि संकुचित निष्ठाओं के स्थान पर ग्राम-निष्ठा, समाज-निष्ठा, आदि।

आज की परिस्थिति में जीविका के साधन व्यक्तिगत स्वामित्व के अन्दर हैं। उसके कारण आपस में प्रतिस्पर्धा है, और इसी आधार पर विकसित व्यक्ति-केन्द्रित जीवन मूल्य हैं और हितों की संकीर्ण मनोवृत्ति है। इसी बुनियाद पर जाति निष्ठा, वर्ग निष्ठा, क्षेत्र निष्ठा औरसम्प्रदाय-निष्ठा बढ़ी है, और राष्ट्र-निष्ठा घटी है। राष्ट्र की भावनात्मक एकता का सवाल जटिल हो गया है, विरोधवादी राजनीति उसे और भी जटिल बना रही है। विदेशी आक्रमणों के समय तो एकता कुछ समय तक दिखाई देती है, आक्रमण-काल समाप्त होते ही पुराने खण्डवादी नारे पुनः देश में गूँजने लगते हैं, क्योंकि जीवन की जो बुनियाद है उसमें समुदाय के प्रति निष्ठा कहीं है ही नहीं।

ग्रामदान से यह स्थिति समाप्त होती है, और एक नयी ग्रामनिष्ठा तथा समाजनिष्ठा पैदा होती है। बीघा में कट्ठा निकालना, ग्रामकोष बनाना, सर्वसम्मति से सब के हित के लिए सर्वजन की ग्रामसभा संगठित करना, आदि सबल सामाजिक प्रवृत्तियों की बुनियाद पर राष्ट्र की भावना-

त्मक एकता के लिए अनिवार्य जाति, वर्ग, क्षेत्र और सम्प्रदाय-निरपेक्ष वृत्ति का निर्माण होता है। गाँव एक होगा तो संकुचित भावनाओं को उभाडनेवाली राजनीतिक गुटबन्दी के गाँव में घुसने के अवसर ही समाप्त हो जायेंगे, क्योंकि तब किसी भी प्रकार के चुनाव में राजनीतिक दलों और गुटों से ग्रामदानी गाँव के लोग साफ-साफ कह सकेंगे—'आप सब एक साथ अपना-अपना विचार हमारे सामने रख दीजिए। आपकी बातें सुनकर हम आपस में विचार करेंगे और जिसे योग्य समझेंगे उसे अपना मत देंगे। कृपया अब दुबारा आप लोग चुनाव की बात लेकर हमारे गाँव में न घुसें।'

ग्राम एकता की इस ठोस बुनियाद पर ही सामाजिक और राष्ट्रीय एकता का विकास हो सकेगा।

(५) विकास के लिए पूंजी का प्रश्न—ग्राम-स्तर पर कोष का संग्रह और श्रम का संयोजन—गाँव की योजना, गाँव की शक्ति, गाँव का हित।

गाँव जब एक स्वतन्त्र इकाई बन जाता है, और अपने गाँव के विकास का संयोजन गाँव में बसनेवाले सब लोगों के हित की दृष्टि से करता है तो उसके सामने प्रारम्भिक पूंजी का प्रश्न खडा होता है। इस समस्या का समाधान करने के लिए गाँव के स्तर पर, उत्पादन का चालीसवाँ भाग और नौकरी-व्यापार आदि से जो कमाई होती है उसका तीसवाँ भाग निकालकर ग्रामकोष का संग्रह करना होता है। इसके साथ ही गाँव की कुल शक्ति, गाँव के हित में कैसे लगे, श्रम, बुद्धि और पूंजी के बीच कैसे सहकार पैदा हो, गाँव इसके लिए योजना बनाता है। और, इस प्रकार पूंजी का सवाल मुख्यतः गाँव की शक्ति से हल हो इसकी शुरुआत होती है। यह पूंजी कर्ज, खेती, उद्योग, व्यापार, सहायता, सबके काम आयेगी, और गाँव में शोषण-मुक्ति और आत्म निर्भरता की अर्थनीति का शुभारम्भ होगा।

(६) शहर का गाँव पर त्रिविध आक्रमण—शहर की राजनीति, शहर की अर्थनीति, शहर की शिक्षानीति—गाँव

की बुद्धि, पूंजी, श्रम सब शहर की ओर—ग्रामदान, खादी, शान्तिसेना से गाँव की रक्षा । लोकनिष्ठ राजनीति, लोकनिष्ठ अर्थनीति, लोकनिष्ठ शिक्षानीति को नयी दिशा ।

शहर और गाँव—आज दोनो की बुनियादी रचना गलत है । इसका परिणाम यह है कि गाँव की कृषि-औद्योगिक-सहकारी जीवन-पद्धति समाप्त हो गयी है । आज की अति केन्द्रित, उद्योगवादी, शहरी सभ्यता गाँव के जीवन पर हावी हो गयी है, और गाँव के जीवन मे जो मूल्य थे वे तेजी से समाप्त होते जा रहे हैं ।

एक दुश्चक्र चल रहा है । विरोधवादी राजनीति गाँव की बची-खुची एकता को खण्डित कर रही है । शहर के बड़े-बड़े उद्योग गाँव के छोटे छोटे उद्योग-धन्धो को तो समाप्त कर ही चुके हैं, उससे भी आगे वे गाँव के आर्थिक जीवन का पूरी तरह अपने नियन्त्रण में लेते जा रहे है । यही क्रम जारी रहा तो वह दिन दूर नही जब गाँवो का अस्तित्व मिट जायगा, वे भारी उद्योगो को कच्चे माल की आपूर्ति (सप्लाई) करनेवाली इकाइयाँ मात्र रह जायँगी ।

जो शिक्षा आज चल रही है उससे नौकरी करने के अलावा छात्रो मे कोई क्षमता पैदा होती नही, और नौकरी शहरो में है । इस प्रकार राजनीति गाँव को तोड रही है, अर्थनीति गाँव को चूस रही है, जिसके परिणामस्वरूप गाँव के श्रमिक और पढे-लिखे लोग शहर की ओर काम की तलाश में बेतहाशा दौड रहे है । ऐसी रचना बन गयी है कि पूँजी शहर में, श्रमिक शहर में, पढा-लिखा मनुष्य शहर में—शहर, जिसकी रचना में मनुष्य और मनुष्य के बीच मनुष्यता के आधार पर कोई सम्बन्ध नही होते ।

शहर की आज की रचना में मनुष्य के जीवन में सहकारी जीवन पद्धति का विकास नही हो सकता । यह प्रत्यक्ष दीख रहा है कि पूँजीवाद और यन्त्रवाद मनुष्य को एक उपकरण मात्र बना रहा है, उससे अधिक कुछ नही ।

गांव की जो कुछ भी जीवन-पद्धति थी जिसमें सहकार का कुछ अंश था, वह समाप्त है। और आज की जो समस्याएँ हैं उन्हें केवल पूँजी या यन्त्रो की शक्ति से हल नही किया जा सकता। इसलिए आज फिर से कृषि-उद्योग के आधार पर सहकारी समाज-रचना की आवश्यकता है जिसमे मनुष्य का मनुष्य के नाते सम्बन्ध स्थापित हो। वह अपनी सम्पूर्ण प्रतिभा के साथ अपने अन्दर मनुष्यता का विकास करे, और केवल उपकरण मात्र बनकर न रह जाय।

इस नयी रचना के लिए वर्तमान परिस्थिति से मुक्ति अनिवार्य है। ग्रामदान, खेती-खादी मूलक ग्रामीण अर्थ-रचना और शान्ति-सेना इस मुक्ति के माध्यम हैं। ग्रामदान से दल-निष्ठ राजनीति की जगह लोक-निष्ठ राजनीति, वर्ग-निष्ठ अर्थनीति की जगह लोक-निष्ठ अर्थनीति, और विशिष्ट समुदाय-निष्ठ सस्कृति की जगह लोक-निष्ठ सस्कृति का विकास होगा। आर्थिक, राजनीतिक और सास्कृतिक रचना का केन्द्र 'लोक' होगा।

(७) यू० एस० एस० आर० (युनाइटेड स्टेट्स आव सर्वोदय रिपब्लिक्स)—ग्राम सभा . बुनियादी, स्वायत्त, आत्म-निर्भर इकाई—प्रखण्ड-सभा, जिलासभा, राज्यसभा, राष्ट्र-सभा, गाँव से लेकर दिल्ली तक नयी व्यवस्था—सब दलमुक्त।

ग्रामदान से बुनियादी लोकतन्त्र की स्थापना होती है। सर्व की शक्ति, सर्व के हित के लिए सर्व की सम्मति से, ग्रामसभा के रूप मे सगठित होती है। इस प्रकार ग्रामसभा आत्म-निर्भर, स्वशासित इकाई बनती है। ज्यो-ज्यो ऐसी इकाइयो की सख्या, जो तेजी से बढ रही हैं, ग्रामदान से भी आगे, प्रखण्डदान के रूप में सगठित होती जायँगी, त्यो-त्यो गाधीजी का सपना साकार होता जायगा कि लोकतन्त्र में मुख्य शक्ति 'लोक' की होगी और सामुद्रिक वर्तुलो की तरह उसका विकास होगा। ग्राम-सभाओ से प्रखण्डसभा, प्रखण्डसभाओ से जिलासभा, जिलासभाओ से राज्यसभा,

और राज्यसभाओ से राष्ट्रसभा—इस तरह गाँव से लेकर दिल्ली तक एक नयी दलमुक्त, लोकनिष्ठ व्यवस्था कायम होगी, और लोकतन्त्र का आज का जो उल्टा स्वरूप है, वह बिलकुल बदल जायगा।

(८) सरकार का दमन, बाजार का शोषण—इनसे बचें कैसे ? सामाजिक, आर्थिक तथा सास्कृतिक समस्याओ की चुनौती और प्रचलित प्रशासकीय और राजनैतिक तन्त्र की अक्षमता—कृत्यो और जिम्मेदारियो का ग्राम स्तर पर विकेन्द्रीकरण आवश्यक—ग्राम-सभा एक सबल, सर्वनिष्ठ माध्यम।

सरकारी नौकरशाही का दुश्चक्र लोगो के जीवन को छिन्न भिन्न और जर्जर कर रहा है। जन-जीवन के हर क्षेत्र में राज्य का प्रवेश है और जनता को हर कदम पर—भ्रष्टाचार तथा बेबसी का शिकार होना पड रहा है। यह लोकतान्त्रिक देश सबल और स्वतन्त्र नागरिको का न रहकर जैसे मुहताज तथा मजबूर लोगो का हो गया हो। सरकारी दमन की तरह ही बाजार का शोषण अपनी चरम सीमा पर है। कच्चा माल उपजानेवाले किसान, मिहनत करनेवाले श्रमिक तथा कलमजीवी, सब 'मालिको' के बाजार में बेभाव बिक रहे हैं। इस परिस्थिति से मुक्ति कैसे हो ? छटपटाहट है, लेकिन कोई मार्ग नही सूझ रहा है।

विज्ञान का विकास हुआ है, लेकिन वह विज्ञान मनुष्य की क्षमता बढाने और रुचिहीन उबानेवाले श्रम को दिलचस्प और आकर्षक बनाने में नही लगा है, बल्कि वह लाखो, करोडो हाथो को बेकार बनाने, शोषण की क्षमता बढाने और सम्पन्नो के आमोद प्रमोद के साधन उपलब्ध करने तक ही सीमित रह गया है। विज्ञान के विकास की इस दिशा के कारण जीविका के साधन थोडे से मालिको के नियन्त्रण में आ गये हैं। बाजार के नित्य नये आकर्षण जीवन के मूल्यो को तोडते जा रहे हैं।

जीविका के आधार बाजार के नियन्त्रण में हैं, और जीवन की पद्धति

बाजारू विज्ञापनो के सचालन में है, इसीलिए समाज का आर्थिक ही नही पूरा सास्कृतिक जीवन ही एक ऐसी चुनौती के सामने है, कि जहाँ से कोई नया मोड नही आया तो सामाजिक और वैयक्तिक जीवन का कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नही रह जायगा ।

बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, उपद्रव, षड्यन्त्र आदि के रूप मे जीवन-मूल्यो का जो छिछलापन और रिक्तता प्रकट हो रही है, असामाजिक और अमानवीय मूल्यो का तीव्र गति से जो विकास हो रहा है, उसे हल करने, यहाँ तक कि कभी-कभी तो सामान्य शान्ति और सुव्यवस्था कायम रखने में भी प्रशासकीय अक्षमता प्रकट हो रही है । ऐसा होना वर्तमान राजनैतिक तन्त्र के कारण सहज-सा हो गया है ।

देश का इतना बडा केन्द्रीय और राज्यस्तरीय प्रशासन-तन्त्र समाज की नित्य प्रति की समस्याओ का समाधान करने में असफल सिद्ध हो रहा है । राजनैतिक दलो को आपसी द्वन्द्व-युद्ध और सत्ता-प्राप्ति के लिए शतरज की मुहर बिठाने से फुरसत नही है । ऐसी स्थिति में विविध समस्याओ की चुनौती का जवाब कौन दे ? एक उपाय है कि कृत्यो और जिम्मेदारियो का ग्राम-स्तर पर विकेन्द्रीकरण हो । लेकिन अगर वह विकेन्द्रीकरण पचायतीराज की तरह एक केन्द्रित राज्य-शक्ति की छोटी इकाई के रूप में होगा तो समस्या का कुछ भी हल नही होगा, बल्कि उसके और उलझने की सम्भावना है, क्योकि वह गाँव के बहुमत-प्राप्त कुछ लोगो का ऊपर से दिये गये अधिकारो के आधार पर बना सगठन है । उसकी रचना और पद्धति केन्द्रीकरण की उसी दिशा का एक अश है जिसमे चलकर सरकार समस्याओ को हल करने मे असमर्थ हो रही है ।

कृत्यो और जिम्मेदारियो का वास्तविक विकेन्द्रीकरण तो ग्रामदान में ही होता है । ग्रामदान में गाँव के लोग सबको मिलाकर सबकी राय से जो ग्रामसभा बनाते है, वह ग्रामसभा विकास और व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी लेती है ।

(६) लोकतन्त्र और समाजवाद का शुभारम्भ—ग्रामदान पहला संगठित कदम—साझेदारी के जीवन (लाइफ आव शेयरिंग) का प्रारम्भिक अभ्यास।

ग्रामदान से दो बातो की शुरुआत गाँव में प्रत्यक्षत होती है—

(१) गाँव के लोगो की चेतना जगती है और गाँव-समाज के लिए कुछ करने की जिम्मेदारी का एहसास होता है। उस जिम्मेदारी को पूरी तरह निभाने के लिए ग्रामसभा के रूप में गाँव-समाज की शक्ति संगठित होती है। यह शक्ति गाँव के किन्ही खास और कुछ लोगो की नही, बल्कि आम और सब लोगो की होती है। इसे हम लोक-शक्ति कह सकते हैं। यह लोकशक्ति सर्व के उदय के लिए सक्रिय होती है, अपनी क्षमता और पुरुषार्थ के भरोसे इसके लिए अपनी व्यवस्था खडी करती है। 'लोक' स्वय अपने 'तन्त्र' को चलाये, इससे बढकर दूसरा लोकतन्त्र क्या होगा? आज का लोकतन्त्र तो केवल प्रतिनिधि-तन्त्र है।

(२) ग्रामदान में गाँव के लोगो की जीविका का जो प्रमुख आधार है भूमि, उसकी व्यक्तिगत मिल्कियत समाप्त होती है, पूरा गाँव-समाज गाँव की कुल भूमि का मालिक बनता है; भूमि का कुछ भाग उन लोगो को प्राप्त होता है जो भूमिहीन हैं, साथ ही हर व्यक्ति अपनी कमाई का एक अश गाँव-समाज के लिए देता है। इस तरह भूमि पर निजी स्वामित्व की जगह ग्राम-स्वामित्व होता है और पूँजी निजी की जगह सामूहिक होती है। गाँव की सामूहिक इच्छाशक्ति और सामूहिक पूँजी से गाँव की योजना चलती है।

इस प्रकार सबके उदय की लोकशक्ति प्रकट होती है जो लोकतन्त्र की बुनियाद है, जीविका के साधन पर समाज का स्वामित्व स्थापित होता है, जो समाजवाद की बुनियाद है। ग्रामदान में जीवन की साझेदारी का यह जो अभ्यास शुरू होता है वह लोकतान्त्रिक समाजवाद का शुभारम्भ है।

(१०) 'बहु' के स्थान पर सर्व की राजनीति, सर्व की अर्थनीति, सर्व की शिक्षानीति, सर्व की धर्मनीति, सर्व की समाजनीति—सर्व की सम्मति और सर्व की शक्ति से सर्व का हित, ऐसी जीवन-नीति।

आज दुनिया में सामन्तवादी व्यवस्था के स्थान पर लोकतान्त्रिक व्यवस्था का प्रगतिशील ढाँचा अधिकांश देशों में अपनाया गया है। लेकिन वह प्रगतिशील ढाँचा भी विशिष्ट से 'बहु' तक आकर सीमित हो गया है। ग्रामदान उसे 'सर्व' तक पहुँचाने की प्रक्रिया है। 'सर्व' की सम्मति के आधार पर सगठित ग्रामसभा से 'बहु' की नही 'सर्व' की राजनीति, ग्रामकोष से 'साहूकारी' की अर्थनीति की जगह 'सर्व' की अर्थनीति शुरू होती है। गाँव के जीवन से धीरे-धीरे सरकार और साहूकार की आवश्यकताएँ कम होती जाती है, गाँव ग्रामसभा के माध्यम से खुद क्रियाशील होता है। सर्व की सम्मति और सर्व की शक्ति से सर्व के हित की जीवन-नीति का क्रमश विकास होता है।

सर्व के उदय की इस प्रक्रिया में सबकी प्रतिभाओ, क्षमताओ और सबके अन्दर जीवन-मूल्यो का विकास करने के लिए सबकी शक्ति एक होकर सक्रिय होती है। एक नये समाज का निर्माण शुरू होता है।

(११) स्त्री और मजदूर की मुक्ति—स्वतन्त्र नागरिकता। विभिन्न धर्मों के प्रति आदर भाव—समानता—सम्प्रदाय-निरपेक्ष सौहार्द-अस्पृश्यता।

ग्रामदान से सर्व के विकास की जो परिस्थिति बनती है, उसमें सबको जीने की समान भूमिका हासिल होती है। ग्रामसभा में स्त्री, और हरिजन मजदूर भी स्वतन्त्र सदस्य की हैसियत रखते हैं। उनकी राय की उपेक्षा करके कोई निर्णय ग्रामसभा नही लेगी। सवैधानिक नागरिकता—वोट देने का अधिकार—के बावजूद आज भी सामाजिक और सास्कृतिक मान्यताओ के कारण स्त्री का कोई स्वतन्त्र स्थान समाज में नही है,

मजदूर आर्थिक विवशता के कारण गुलाम है। ग्रामदान से इन दोनो दलित समुदायो के लिए सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियो की गुलामी से मुक्ति का रास्ता खुलता है।

'सर्व' की जीवन-नीति में, जिसकी शुरुआत 'सर्व' की समान साझेदारी (पार्टिसिपेशन) से होती है, सब धर्मों के प्रति आदर-भाव तथा सम्प्रदाय और जाति-निरपेक्ष भाईचारे का सम्बन्ध सहज रूप से विकसित होगा।

(१२) जनता में व्यापक 'एपथी', 'डिनायल', 'इनर्शिया'—उसे सक्रिय बनाने का उपाय ग्रामदान।

स्वराज्य के बाद नये भारत से आम लोगो की जो अपेक्षाएँ थी, सदियो से दबी जिन आकाक्षाओ का उभाड हुआ था, उनको लेकर घोर निराशा ही हाथ लगी है। राजनीतिक दलों के आश्वासनो और थोथे नारो ने उसमें और वृद्धि की है, दलो की गुटपरस्ती ने लोक-जीवन की अवशेष एकता को समाप्त कर दिया है, प्रशासनिक भ्रष्टाचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया है, और जीवन की सामान्य आवश्यकताओ की भी पूर्ति अत्यन्त कठिन हो गयी है। स्वराज्य-प्राप्ति के अभियान में जो जनचेतना जागृत हुई थी, वह आज मर-सी गयी है। यही कारण है कि आज जनता में व्यापक उदासीनता (एपथी), अप्रवृत्ति (डिनायल) और जडता (इनर्शिया) व्याप्त है। उदासीनता के कारण लोग किसी चीज में रुचि ही नही लेते, जैसे उनको मतलब ही नही है। और, अप्रवृत्ति तो इतनी गहरी है कि बडी-से-बडी समस्या हो, उसे समस्या हम मानते ही नही। जडता जीवन में व्याप्त हो गयी है—न सोचना, न करना। मन मे कोसते रहेंगे लेकिन कुछ करने की बात सोचेंगे। हम इन सब रोगो के शिकार हो गये हैं।

देश की विरोधवादी राजनीति समय-समय पर उनके असन्तोष को जगाकर, क्षोभ को उभाडकर उपद्रव कराती है, और लोक-कल्याण के नाम पर जनता के सामने लुभावने चित्र पेश करती है। दोनो का लक्ष्य

एक है सत्ता-प्राप्ति के लिए लोकप्रियता हासिल करने का, ताकि चुनाव में बहुमत उनका समर्थन करे। गाँव को, समाज को उसकी स्वतन्त्र शक्ति के आधार पर खडा करने का कोई कार्यक्रम नही है। सबका एक ही नारा है 'हमें वोट दो, हम तुम्हारे लिए सब कुछ करेंगे।' समाजवादियो का 'समाज' लोकतन्त्रवालो का 'लोक', सब कुछ सत्ता में समा गया है। समाज या लोक की शक्ति इस परिस्थिति मे क्षीण हो जाय तो आश्चर्य क्या है ?

ग्रामदान ही आज एकमात्र कार्यक्रम है लोकतन्त्र के 'लोक' और समाजवाद के समाज को सचेत, सक्रिय और स्वचालित करने का; उनमे आशा और आत्मविश्वास भरने का। ग्रामदान में वादे नही हैं, तुरन्त उठकर कुछ करने की प्रेरणा है।

२. चित्र (इमेज) कैसे प्रस्तुत करें ?

क. साहित्य द्वारा—

विचार और भावना की अभिव्यक्ति का सबल माध्यम तो साहित्य है ही, व्यापक स्तर पर चेतना को जगाने और भावनाओ को सक्रिय बनाने के लिए भी साहित्य एक महत्वपूर्ण माध्यम है। लोकशिक्षण के लिए लोगो के स्तर को ध्यान मे रखते हुए स्थायी और प्रचार-साहित्य का निर्माण किया जाना चाहिए।

(१) स्थायी साहित्य—

विचार-प्रधान ग्रन्थ। गाधी विनोबा के विचारो को भाष्य-टीका सहित प्रस्तुत करना होगा, उनको ऐतिहासिक सन्दर्भ में बिठाना होगा, वर्तमान की अल्पकालिक और दीर्घकालिक समस्याओ से जोडना होगा। वैज्ञानिक और सयुक्तिक आधार पर इस युग की चुनौती का उत्तर ग्रामदान है, इसे प्रस्तुत करना होगा।

(२) प्रचार साहित्य—

आम जनता के लिए फोल्डर्स, नोटिस, पोस्टर, चार्ट्स,

छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ आदि तैयार करनी होंगी । स्थानीय समस्याओं का अध्ययन, गाँव के आर्थिक शोषण और रूढ़िगत उत्पीड़न तथा अन्य दैनन्दिन समस्याओं का विश्लेषण करके लोक की चेतना जगानेवाली सुलभ, सरल भाषा-शैली में साहित्य-रचना करनी होगी, ग्रामदान को समाधान के रूप में प्रस्तुत करना होगा ।

विभिन्न स्तर के लोगों के लिए 'ग्रामदान क्या', 'ग्रामदान क्यों', 'ग्रामदान कैसे', 'ग्रामदान से ग्राम-स्वराज्य' इत्यादि विषयों पर थोड़े में प्रामाणिक जानकारी देनेवाली पुस्तिकाएँ तैयार करनी होंगी, ग्रामदानी गाँवों के लोग समस्याओं को स्वयं मिल-जुलकर हल कर सकें, इसके लिए उनको मदद देनेवाली, पुस्तिकाएँ जैसे—'ग्रामसभा का सगठन कैसे करें ?' बीघा-कट्ठा कैसे निकालें ?' 'ग्रामकोष कैसे इकट्ठा हो', 'झगड़े आदि गाँव में ही कैसे निपटाये जायँ', 'गाँव के विकास की योजना कैसे बनायें', 'बेकारी निवारण कैसे ?' तैयार करनी होंगी । ग्रामदान के पहले की स्थिति, ग्रामदान के बाद की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन करके गाँव की जानकारी के लिए छोटी पुस्तिकाएँ तैयार करनी होंगी ।

(३) कार्यकर्ताओं के लिए—

'सर्वोदय विचार' पर चर्चा के कुछ मुख्य-मुख्य मुद्दे भी तैयार करने होंगे, जैसे—'सर्वोदय का राजनीतिक दृष्टिकोण', 'विज्ञान, यत्रीकरण और सर्वोदय', 'उद्योगों का केन्द्रीकरण या विकेन्द्रीकरण क्या, क्यों ?' 'ग्रामदान से लोकतान्त्रिक समाजवाद की स्थापना कैसे ?' 'ग्रामदान सरकार की शक्ति से क्यों नहीं ?' 'ग्रामस्वराज्य और पचायती राज', 'सघर्ष बनाम सहकार', 'दान' क्यों, 'कानून' क्यों नहीं ?' 'तात्कालिक और स्थानीय समस्याओं तथा घटनाओं के के प्रति सर्वोदय का दृष्टिकोण क्या है ?' ग्रामदान का काम करनेवाले कार्यकर्ताओं के लिए जिला या प्रान्त के सगठनों द्वारा समय समय पर इस दिशा के निर्देशक परिपत्र तैयार करके भेजे जायँ ।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन से इस प्रकार की कुछ पुस्तकें प्रकाशित भी हुई हैं—जो 'गाइड-बुक' का काम करेंगी । जैसे—

(१)	ग्रामदान	विनोबा
(२)	चीन-भारत सीमा-संघर्ष	"
(३)	कश्मीर के बारे में	"
(४)	कुछ सामयिक प्रश्न	"
(५)	चुनाव	"
(६)	देश की समस्याएँ और ग्रामदान	जयप्रकाश नारायण
(७)	ग्रामदान : शंका और समाधान	धीरेन्द्र मजूमदार
(८)	ग्रामदान-निर्देशिका	मनमोहन चौधरी
(९)	ग्राम-स्वराज्य का त्रिविध कार्यक्रम	
(१०)	गाँव-गाँव में अपना राज	
(११)	ग्रामदान क्या है ?	
(१२)	शान्ति-सेना क्या है ?	
(१३)	गाँव की खादी	
(१४)	गाँव का विद्रोह	राममूर्ति
(१५)	तमिलनाड में ग्रामदान	वसन्त व्यास
(१६)	आन्ध्र में ग्रामदान	"
(१७)	कोरापुट में ग्रामदान	"
(१८)	मध्यप्रदेश का ग्रामदान : मोहगाँव	"
(१९)	सर्वोदय-मार्गदर्शी—१, २, ३	

जहाँ तक सम्भव हो, अपने संगठनों के अलावा अन्य पत्र-पत्रिकाओं में और रेडियो से भी ग्रामदान के विचार का प्रकाशन और प्रसारण हो, लोगों को आन्दोलन की प्रगति की प्रामाणिक जानकारी मिले, ऐसी कोशिश होनी चाहिए ।

ख. सम्पर्क द्वारा—

प्रमुख व्यक्तियों से सम्पर्क, टोली-गोष्ठी, ग्रामसभा, क्षेत्र-सम्मेलन

आदि के माध्यम से अधिक-से-अधिक लोगों के पास स्पष्ट विचार पहुँचे, इसका प्रयास करना चाहिए। पदयात्रा से व्यापक प्रचार सम्भव होता है। सघन विचार प्रचार और शिक्षण के लिए सीमित क्षेत्रों में शिविर, परिसंवाद, प्रदर्शनी, लोकमंच (संगीत, नाटक आदि) के आयोजन अत्यन्त उपयोगी होंगे। अपनी पत्र-पत्रिकाओं के पाठकों तथा खादी प्रेमियों को इस प्रकार के कार्यक्रमों में सम्मिलित करने की कोशिश होनी चाहिए। सम्पर्क और विचार-प्रचार की दृष्टि से कुछ बातें विशेष ध्यान देने की है—

हम जिनके बीच विचार-शिक्षण का काम कर रहे हैं, उनके साथ हमारा संचार (कम्यूनिकेशन) सक्षम हो सके, इसके लिए आवश्यक है कि—

१ किसी व्यक्ति या समूह के सामने जो विचार जिस व्यक्ति, पुस्तक या अन्य किसी स्रोत से पहुँचाया जाय, वह (स्रोत) उसकी नजर में प्रामाणिक और विश्वसनीय हो,

२ एक बार में लोग जितना समझ सकें उतना ही कहा जाय, पूरी बात एक साथ कहने से पकड़ में नहीं आती,

३ एक बार कह देने से ही सन्तोष न माना जाय, बार-बार कहा जाय। विचार को प्रामाणिक बनाने के लिए सही, सिद्ध, प्रमाण और उदाहरण प्रस्तुत किये जायँ,

४ विचार को स्थानीय और तात्कालिक समस्याओं के समाधान के रूप में प्रस्तुत करने पर विचार के प्रति आकर्षण बढ़ता है,

५ इस बात का ध्यान रखा जाय कि जिस प्रश्न से सम्बन्ध रखनेवाला विचार हम प्रस्तुत कर रहे हैं, उस प्रश्न पर लोगों के मन में पहले से क्या विचार है, ताकि हम अपना विचार उस सन्दर्भ में रख सकें। इससे सुननेवालों की रुचि बढ़ती है,

६ हरएक की अलग-अलग भूमिका होती है। कोई तर्क से प्रभावित होता है, कोई भावना से, कोई किसी अन्य पहलू से। व्यक्तिगत

सम्पर्क और चर्चा में, जिस व्यक्ति से चर्चा करनी है, पहले उसके मनोभावो को समझना चाहिए,

७ प्रयत्न रहे कि विचार मनुष्य के विवेक को छूए, उसकी सामाजिक चेतना को जगाये और उसको सही निर्णय की प्रेरणा दे, न कि हमारी कल्पना, विचार या प्रभाव उसके ऊपर हावी हो जाय ।

ग. तात्कालिक स्थानीय समस्याओं को माध्यम बनाकर—

बाढ, आगजनी, सूखा आदि प्राकृतिक प्रकोप के अवसरो पर सहानुभूतिपूर्वक प्रकोपग्रस्त लोगो की सेवा, सामाजिक प्रक्षोभ—साम्प्रदायिक दगे, तथा अन्य प्रकार के प्रदर्शनो आदि के अवसर पर शान्ति और सन्तुलन कायम करने की चेष्टा, सरकारी कर्मचारियो, अधिकारियो आदि की प्रतारणा और राजनीतिक दलो की गुटबन्दी, और जातीयता आदि को उभाडनेवाले कार्यक्रमो के अवसर पर लोगो के अधिकाधिक निकट जाने और मैत्रीपूर्ण वातावरण बनाकर सामूहिक लोक-चेतना जगाने तथा सगठित करने की कोशिश करनी चाहिए । इन तात्कालिक और स्थानीय समस्याओ के समाधान में लगने पर लोगो की भावना हमारे अनुकूल होती है ।

ग्रामदान : प्राप्ति (लोक-निर्णय) : २ :

१. ग्रामदान की शर्तें, और कुछ प्रश्न :

ग्रामदान की शर्तों को लेकर गाँव के लोग, खास तौर पर बडे गाँवो के लोग, तरह-तरह के सवाल पूछते हैं । इसलिए जरूरी है कि हम ग्रामदान के विचार को अच्छी तरह समझें, लोगो के प्रश्नो का सही उत्तर दें, ताकि उनके मन के भय और शकाऐं दूर हो और उन्हें विश्वास हो जाय कि आज की दु खपूर्ण स्थिति से मुक्ति का एक ही मार्ग है—ग्रामदान ।

ग्रामदान को लेकर कई सवाल उठते हैं । उनमें से कुछ ये हैं

(क) अगर गाँव दूसरी शर्तें मान ले तो क्या स्वामित्व-विसर्जन की शर्त फिलहाल छोडी या हलकी नहीं की जा सकती ?

जाहिर है कि अगर स्वामित्व-विसर्जन की शर्त शुरू में हलकी कर दी जाय तो 'ग्रामदान' की सख्या बहुत बढ जायगी, लेकिन सोचना यह चाहिए कि ऐसा करना क्रान्ति की दृष्टि से कहाँ तक उचित होगा । स्वामित्व के प्रश्न को लेकर गाँववालो की झिझक स्वाभाविक है । आज के समाज को, जो सत्ता और सम्पत्ति को ही सब कुछ मानता है, देखकर भूमि का स्वामी सोचता है कि क्या स्वामित्व ग्रामसभा को देकर वह सुरक्षित रह सकेगा ? लेकिन आज स्थिति यह है कि भूमिहीनो को क्या कहा जाय, कुछ थोडे बडे मालिको को छोडकर बाकी मालिक मालिकी रखते हुए भी सुरक्षित नही हैं, पर मनुष्य का स्वभाव ऐसा है कि परिचित बुराई अपरिचित अच्छाई से अधिक अनुकूल मालूम होती है । गाँववालो के मन की यही गाँठ तो खोलनी है । इस गाँठ के खुलते ही आज के गाँव की जगह एक नये गाँव का

जन्म हो जाता है; पड़ोसी का पड़ोसी के प्रति भाव बदल जाता है । हम सब जानते हैं, और जो लोग गाँवों में काम करते हैं वे दिन-रात देखते हैं, कि गाँव में रहनेवालों के मन में ग्राम-भावना नहीं है, इसलिए गाँव का कोई काम मिलकर नहीं हो पाता । सच तो यह है कि हरएक अपने और अपने परिवार के बारे में सोचता है, गाँव की फिक्र किसे पड़ी है ? और, यह ग्राम-भावना मालिकी के रहते बननेवाली नहीं है । स्वामित्व के कारण गाँव में तरह-तरह की दीवालें खड़ी हो जाती हैं—मालिक-मजदूर के बीच, मजदूर-मजदूर के बीच, और स्वयं मालिक-मालिक के बीच । ये दीवालें दिलों को जुड़ने नहीं देतीं । हरएक का हृदय ईर्ष्या और प्रतिद्वन्द्विता की आग से जलता रहता है । गाँव में जो भी साधन हैं, जो भी पूँजी, बुद्धि और श्रम-शक्ति है, उस सबका इस्तेमाल एक-दूसरे को गिराने में होता है, न कि मिलकर सबको उठाने में । निजी मालिकी से उत्पादन के साधनों का सदुपयोग नहीं हो पाता, और मालिकी शोषण और मुनाफाखोरी को जन्म देती है जो समाज की तबाही का कारण बनती है । इसलिए यह मान लेना चाहिए कि स्वामित्व-विसर्जन हमारी क्रान्ति का प्राण है । कोई आज माने या कल, लेकिन स्वामित्व-विसर्जन की बात हम छोड़ नहीं सकते । अगर सम्पत्ति का स्वेच्छा से विसर्जन न हुआ तो इस देश को व्यापक पैमाने पर खून की आग में जलने से कैसे बचाया जा सकेगा ? इसलिए

अनुमति आवश्यक हो या उसे केवल सूचना दे दी जाय ?

कुछ लोगों का ऐसा विचार है कि जब तक खेती परिवार की है—न सहकारी है, न सामूहिक—तब तक परिवार को छूट होनी चाहिए कि कर्ज के लिए अगर वह अपने कब्जे की जमीन सरकार या सहकारी समिति (कोआपरेटिव सोसाइटी) के हाथ बिक्री करना या बन्धक रखना चाहे तो आजादी के साथ ऐसा कर सके, और ग्रामसभा को केवल सूचना दे दे। यह ठीक है कि परिवार को उसकी आवश्यक्ता के अनुसार कर्ज मिलना चाहिए, लेकिन यह भी जरूरी है कि सही काम के लिए कर्ज लिया जाय और उसे सही ढग से खर्च किया जाय। ग्रामसभा के सिवाय यह कौन देखेगा कि सही कर्ज का सही इस्तेमाल हुआ ? ग्रामदान में शरीक होने-वाले परिवार गाँव में स्थित अपनी कुल जमीन की मालिकी ग्रामसभा को सौंपते हैं। जमीन के खाते परिवार-परिवार के नाम न रहकर एक हो जाते हैं—ग्रामदानी गाँव का एक खाता ग्रामसभा के नाम से। ग्रामसभा इकट्ठा सरकार को लगान देगी। ग्रामसभा परिवारों को जानेगी लेकिन सरकार केवल ग्रामसभा को जानेगी, रजिस्टर्ड सस्था होने के नाते उसीको कर्ज, सहायता आदि देगी। ग्रामसभा विकास की योजना बनायेगी, और योजना के अनुसार काम के लिए आवश्यक साधन आदि जुटायेगी। ऐसी हालत मे यह उचित ही नही, जरूरी है कि जमीन को बेचने या बधक रखने के लिए ग्रामसभा की अनुमति ली जाय। कर्ज का कोई दूसरा उपाय नही रहेगा, और कर्ज जरूरी होगा, तो ग्रामसभा अनुमति नही देगी, ऐसा मानने का क्या कारण है ? और अगर ग्रामदान के बाद गाँव की नयी व्यवस्था में ग्रामसभा का इतना स्थान भी नही होगा तो वह गाँव की सामूहिक शक्ति का आधार और विकास का माध्यम कैसे बनेगी ?

(ग) मजदूर को किसान बनाने से गाँव की उत्पादन-पद्धति पर क्या असर होगा ?

हम लोग कहते हैं कि ग्रामदान से भूमिहीन को भूमि मिलेगी और खादी-ग्रामोद्योग से धन्धा मिलेगा, भले ही बीघा-कट्ठा से तुरन्त इतनी भूमि न निकले कि हर भूमिहीन को मिल जाय। लेकिन मालिक आगे देखता है, और सोचता है कि अगर मजदूर को भूमि और धन्धा मिल गया तो वह हाथ से निकल जायगा, और उसकी खेती के लिए सस्ता श्रम नही मिल सकेगा। आज की खेती हो ही रही है इस आधार पर कि मालिक ने मजदूर को बांध रखा है—कर्ज देकर, जोतने के लिए कुछ थोडी भूमि देकर, समय-समय पर कुछ मदद देकर, आदि। वह नही चाहता कि मजदूर की हैसियत बदले।

कुछ थोडे से बडे मालिकों को छोडकर बाकी मालिकों के लिए मजदूर-खेती घाटे का सौदा है। मालिक और मजदूर का सम्बन्ध इतना बिगड गया है कि मजदूर कम-से-कम काम करके ज्यादा-से-ज्यादा दाम लेना चाहता है, और मालिक कम-से-कम दाम देकर ज्यादा से-ज्यादा काम लेना चाहता है। एक काम की चोरी करता है, दूसरा दाम की। नतीजा यह होता है कि मालिक मजदूर में ऐसा सम्बन्ध होने के कारण अच्छी खेती नही हो पाती, और दोनो को परेशानी और गरीबी की जिन्दगी बितानी पडती है। दोनो इस सम्बन्ध से ऊबे हुए हैं, लेकिन करें क्या, सूझ नही रहा है। ग्रामदान उन्हें रास्ता बता रहा है। वह रास्ता क्या है? बीघा-कट्ठा तो प्रतीक है जिससे आज का भूमि-मालिक इस मान्यता की घोषणा करता है कि आज जो भूमिहीन है उसे भी धरती-माता की सेवा करने का अधिकार है। आज का समाज उसके इस अधिकार को नही मानता। ग्रामदान में यह अधिकार तो मान्य हो जाता है, लेकिन जब ग्रामसभा बैठेगी, और गाँव में हरएक के खाने-कपडे की चिन्ता करने लगेगी, तो गाँव का हर व्यक्ति सोचेगा, मुख्य रूप से भूमिवान सोचेंगे, कि किस तरह उन सब परिवारों को, जिनके पास रोजी का कोई दूसरा समुचित धन्धा नही है, और जो खेती करना चाहते हैं, जमीन मिले। यह जिम्मेदारी ग्रामसभा को उठानी ही पडेगी। जिसके पास जमीन है वह स्वेच्छा से अधिक

देगा। ग्रामदान में गाँव के विकास की जो योजना है उसका सही रूप जैसे-जैसे प्रकट होगा गाँव एक परिवार बनता जायगा जिसमें सबको मिलकर सबकी चिन्ता करनी पड़ेगी।

मान लीजिये सबको भूमि का एक टुकड़ा मिल गया, और सबके घर में धन्धा पहुँच गया—चरखा तो तुरन्त पहुँच सकता है—तो खेती कैसे होगी ? तीन तरीके हैं : एक, हर परिवार अपनी-अपनी खेती करे, और आपसी मेल के आधार पर परिवार आपस में श्रम-सहकार करे। दो, छोटे गाँव में पूरे गाँव की, या बड़े गाँव में कुछ परिवारों की टोलियों की, सहकारी खेती हो (जिसमें खेत अपना होगा लेकिन खेती मिलकर होगी और खेती का खर्च काटकर भूमि के हिसाब से अनाज का बँटवारा हो जायगा)। तीसरा, सामूहिक खेती होगी—खेत भी सबका, खेती भी सबकी, अनाज भी सबका लेकिन अनाज में सबका अलग-अलग हिस्सा। गाँव में जिन परिवारों को जो पद्धति अच्छी लगे वे उसे अपनायें। हर हालत में ग्रामसभा अपने कोष से खेती के लिए सुधरे यन्त्र, खाद, अच्छे बीज, दवा, सिंचाई आदि की व्यवस्था करेगी। गाँव खुद निर्णय करे कि वह खेती की कौन सी पद्धति अपनायेगा। यह भी हो सकता है कि परिवारों के अलग अलग निर्णय से एक ही गाँव में कोई दो या तीनों पद्धतियाँ साथ-साथ चलें। कोई भी पद्धति अपनायी जाय, तुरन्त मजदूरों का मिलना बन्द हो जायगा, ऐसी बात तो है नहीं। हाँ, यह जरूर है कि धीरे धीरे श्रम-सहकार, यानी मिलकर एक-दूसरे के खेत में काम करने की पद्धति विकसित करनी पड़ेगी।

जब खेती के नये, सुधरे यन्त्र होंगे तो श्रम-सहकार बहुत आसान हो जायगा। आज भी कई जगह गन्ने की गोड़ाई तथा दूसरे कई काम इसी पद्धति से होते हैं। श्रम-सहकार ही सबसे स्वस्थ पद्धति है, इसमें आपसी सम्बन्ध भी अच्छे-से-अच्छे रहेंगे, और उत्पादन भी अधिक से-अधिक होगा। लेकिन उसके पहले भी मजदूर को साझेदार बना लेना चाहिए। इसका यह अर्थ है कि किसान के खेत में सामान्य (नार्मल) से अधिक जो उत्पादन

हो उसका बँटवारा हो। आपस में तय हो जाय कि कितना भाग श्रमिक का हो और कितना मालिक का।

इसी तरह बटाईदारी ग्रामसभा के द्वारा सामूहिक तौर पर हो सकती है ताकि किसान और बटाईदार दोनो को उचित लाभ हो, और सम्बन्ध भी बने रहें।

यह तय है कि अगर हमारे देश को आज की दुनिया में जीवित रहना है, और भेडिया की तरह एक-दूसरे को नोच-नोचकर खा नही जाना है, तो काम न करने का जो संस्कार दिमाग में घुसा हुआ है उसे निकालना ही पडेगा। यह असम्भव है कि कुछ थोडे लोगो की मेहनत से पूरे देश का पेट भरे। ये हजारो ग्रामदान जिस दिन ग्रामसभाएँ बनाकर अपनी समस्याओ पर विचार करना शुरू करेंगे उस दिन उन्हें पता चलेगा कि आज की शिक्षा कितनी निकम्मी है, उसी दिन गाँव गाँव से नयी तालीम की माँग उठेगी, और हर हृदय में यह कामना जगेगी कि हर व्यक्ति शक्तिभर श्रम करे, और सब आपस में श्रम सहकार करें। थोडे से पेशेवर मजबूर मजदूरो के भरोसे खेती कब तक चलेगी, और कैसे सुधरेगी ?

जब लोगो के सामने ग्रामदान का यह भव्य चित्र आयेगा तो मन से भय निकल जायगा, और लोग समझने लगेंगे कि अलग अलग परिवार जीवन की लडाई में हारेंगे—हार तो वे रहे ही हैं—लेकिन मिलकर काम करेंगे तो सब जीतेंगे।

(घ) थोडे टुकडे कितने भूमिहीनो को मिलेंगे ? बाकी भूमिहीनो से क्या कहें ?

जाहिर है कि बीघा कट्ठा में मिले टुकडे सब भूमिहीनो को नही मिलेंगे। भूमिहीनता मिटाने, सबको रोटी रोजी देने का सवाल हल करने की जिम्मेदारी ग्रामसभा को ही लेनी होगी। हर व्यक्ति को, जो खेती करना चाहता है, जमीन मिलनी चाहिए फिर वह चाहे जिस पद्धति की खेती करना तय करे। कोई तर्क देकर किसीको भूमि से वंचित नही रखा जा सकता।

भूमि का प्रबन्ध गाँववालो के मिलकर करने से ही होगा। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि केवल खेती से गुजर होना सम्भव नही है, इसलिए हर परिवार को उद्योग भी देना पड़ेगा—वह उद्योग जो आँगन में चले, गाँव या क्षेत्र में चले और जिसका खेती से मेल बैठे। इस तरह ग्रामदान हर गाँव और हर परिवार को कृषि-औद्योगिक (ऐग्रोइंडस्ट्रियल) बनाने की दिशा मे पहला कदम है। जब तक खेती और उद्योग की समन्वित योजना गाँव-गाँव में नही चल जाती तब तक ग्रामसभा को, प्रखण्डसभा को, और सरकार को मिलकर यह स्थिति पैदा करनी पड़ेगी कि जो आठ घण्टे काम करने को तैयार हो उसे भोजन और वस्त्र की गारंटी रहे। यह गारंटी दी जानी चाहिए, और दी जा सकती है। हाँ, उसके लिए विकास की मौजूदा रीति-नीति को बुनियाद से बदलना पड़ेगा। ग्रामदान उस परिवर्तन का ही तो आन्दोलन है, और ग्रामसभा उसका माध्यम। यही एक ऐसा आन्दोलन है जो भूमिहीन को गाँव, सेवा सस्थाओ और सरकार की चिन्ता और चिन्तन का विषय बना रहा है, उसे दूसरो के साथ समान हैसियत का नागरिक बना रहा है, और बार-बार घोषणा कर रहा है कि जिसके पास श्रम है उसे खाने, पीने और जीने का उतना ही अधिकार है जितना उसे जिसके पास सिक्का है। लेकिन ग्रामदान किसी की मालिकी नही मानता—न सिक्केवाले की, न श्रमवाले की। क्रान्ति का यह स्वर्णिम स्वरूप गाँववालो के सामने प्रस्तुत किया जाना चाहिए। (यह न कहा जाय कि जब पेट खाली हो तो क्रान्ति की बात नही सुनी जाती। सुनी जाती है, और खूब सुनी जाती है। सामने के भविष्य की स्पष्ट रेखाएँ वचित मानव में जो आशा पैदा करती है उनमें विलक्षण सजीवनी शक्ति होती है। आज तक की क्रान्तियो ने मजदूर को नारो और सघर्षो के जगल में ले जाकर छोड दिया है। वह भटकता रहा है, और अन्त में खो गया है। अब पहली बार वह अपनी ही नही, अपने पडोसियो की भी मुक्ति में साझीदार बन रहा है। यह बात उसे बतानी चाहिए।

(ङ) मालिक-मजदूर के बीच की खाई ग्रामदान से ही खत्म होगी !

किसी-किसी गाँव में यह अनुभव आता है कि भूमिवान ग्रामदान के लिए तैयार हो जाते हैं, लेकिन भूमिहीनो में से कुछ, या कही ज्यादा भी, तैयार नही होते, या टालमटोल करते हैं। देखने मे यह बात बेतुकी मालूम होती है, क्योकि हम मानते हैं कि ग्रामदान में भूमिहीन को देना क्या है, उसे तो पाना ही पाना है, फिर उसे ग्रामदान से क्यो पिछड़ना चाहिए ? यो तो ग्रामदान मे हरएक को देना है, और हरएक को पाना है, लेकिन भूमिहीनो को कही-कही जो भय होता दिखायी देता है—यद्यपि भय न व्यापक है, और न टिकनेवाला—उसके कारण स्पष्ट हैं। तरह-तरह की बातें कहकर उनसे अँगूठे का निशान लिया गया है, दस्तखत कराया गया है, उनकी जमीनें छीनी गयी है, कर्ज की नालिश की गयी है, वे मुकदमे में फँसाये गये हैं। यह सब हुआ है, और आज भी हो रहा है। फिर कैसे मजदूरो को विश्वास हो कि ग्रामदान का कागज मालिको का मन साफ कर देगा ? सचमुच मालिक और मजदूर के बीच की खाई इतनी जबरदस्त है कि दोनो को नये सिरे से विश्वास के धागे मे बाँधना आसान नही है, लेकिन यह भी साफ है कि अगर दोनो का एक-दूसरे के प्रति दिल साफ न हुआ तो गाँव को बचाना असम्भव है। ग्रामदान का अनुभव बता रहा है कि भले ही शुरू में कुछ भूमिहीन आनाकानी करे, लेकिन समझाने पर समझ जाते हैं, और एक बार समझ जाने पर पीछे नही हटते, और कुछ तो बड़ी उदारता और उत्साह के साथ काम करते हैं।

(च) सर्वसम्मति और सर्वानुमति का व्यावहारिक स्वरूप क्या होगा ?

ग्रामसभा का विचार आकर्षक है, लेकिन विरोध और वैमनस्य से जर्जर गाँव में सर्वसम्मति या सर्वानुमति से कोई निर्णय होगा कैसे ? बात-बात में लड़नेवाले गाँववालो को इसका अभ्यास कैसे कराया जायगा ?

जैसे-जैसे ग्रामदान की हवा बनती जा रही है, और ग्रामदान के बाद प्रखण्डदान और अनुमण्डलदान होते जा रहे हैं, (और अब जिलादान की तैयारी हो रही है) कई बातें जो असम्भव मालूम होती थी अब सम्भव मालूम होने लगी हैं। लोगो में यह प्रतीति पैदा होती जा रही है कि 'गाँव' एक है, और एकता से ही वह बच सकता है। एकता की भावना ज्यो-ज्यो बढ़ेगी आदमी का दिमाग जाति, दल, वर्ग से ऊपर उठकर पूरे 'गाँव' की बात सोचेगा। ग्रामदान से गाँव में ग्रामसभा के द्वारा जो व्यवस्था कायम होगी उसमें सबकी रुचि होगी क्योकि उसके हाथ में दो चीजे ऐसी होगी जिनसे सबका स्वार्थ जुड़ा होगा—एक, ग्रामकोष, दूसरी जमीन। स्वार्थ की रक्षा के लिए ग्रामसभा का ठोस सगठन और उसकी पूर्ण सक्रियता को बनाये रखना जरूरी है, इसलिए भी ज्यादा-से-ज्यादा लोगो का जोर रहेगा कि वह टूटने न पाये।

आज गाँव में लड़ाई क्यो होती है ? दो कारण मुख्य है—एक, चुनाव, दूसरा, जमीन की मालिकी, और उससे उठनेवाले सवाल। एक बार चुनाव का सिलसिला खत्म हो जाय, और जमीन का खाता ग्रामसभा के नाम हो जाय तो झगडे के दो सबसे बड़े कारण समाप्त हो जायेंगे और, इन कारणो के समाप्त होने पर झगड़ा लगानेवाले भी नही रह जायेंगे।

पुलिस-अदालत मे गाँव के झगडे न जायें, यह कोशिश गाँव के लोगों को आपस में जोड़ेगी। ग्रामदान के बाद ग्रामसभा बन जाने पर शान्ति का वातावरण बनेगा, और एक ऐसा नेतृत्व विकसित होगा जो शान्ति बनाये रखने का प्रयत्न करता रहेगा। गाँव का बुरा-से-बुरा आदमी हो, वह गाँव के प्रबल बहुमत के मुकाबिले नही टिक सकेगा।

ग्रामसभा स्वय एक बड़ी रचनात्मक शक्ति होगी। फसलो की रक्षा, झगडो का निबटारा, कर्ज की सुविधा, विकास के काम, जब सब उसकी ओर से होगें तो उसे सबकी भक्ति मिलेगी, और सब मिलकर उन्नति की बात सोचेंगे। खेती, उद्योग, स्वास्थ्य, शिक्षा, सुरक्षा, आदि को

लेकर मामूली मतभेद भले ही हो जायें, लेकिन विरोध और संघर्ष की नौबत क्यों आयेगी? [मतभेद हो तो हर्ज भी नहीं, लेकिन विरोधवाद और संघर्ष को टालना चाहिए।] गांव की नयी व्यवस्था और वातावरण में इनको टालना आसान होगा, क्योंकि जीवन के बुनियादी सवाल सबके लिए समान होंगे।

इस सम्बन्ध में दो बातों की ओर ध्यान देना आवश्यक है। पहली बात यह है कि ग्रामसभा के अध्यक्ष, मंत्री और कार्य-समिति के सदस्यों के चुनाव में सर्वसम्मति का आग्रह रखा जाय। किसी हालत में ग्रामसभा बनाने की जल्दी में बहुमत से चुनाव न कराया जाय। अनुभव आ रहा है कि सर्वसम्मति का आग्रह सफल होता है। समझौते से रास्ता न निकले तो निर्णय लाटरी डालकर किया जाय।

दूसरी महत्त्व की बात यह है कि जो लोग ग्रामदान में शामिल नहीं हैं उनके साथ दुराव की नीति न बरती जाय। ग्रामसभा में तो वे सदस्य रहेंगे ही, लेकिन इस नाते उनके प्रति हर बात में उदारता बरती जायगी तो बहुत जल्द वे ग्रामकोष और बीघा-कट्ठा में भी शरीक हो जायेंगे, और महसूस करेंगे कि ग्रामदान में उनका हित है, अलग रहने में नहीं है। गांव के थोड़े से लोग 'तूफान' के मुकाबिले कब तक ठहर सकेंगे? लेकिन नीति उन्हें दबाकर नहीं, बल्कि प्रेम से अपने में मिलाने की होनी चाहिए।

यह सब होने पर भी सम्भव है कि आपसी रगड़े-झगड़े के कारण गांवों में दो-चार ग्राम-सभाएँ लँगड़ी-लूली निकल जायें। इसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। दूसरी ग्रामसभाएँ और स्वयं प्रखण्डसभा उन्हें रास्ते पर लाने का काम करेगी। अन्त में हारने पर ग्रामदान-कानून में उनके 'सुपरसेशन' की गुंजाइश रखी गयी है। लेकिन इन सबसे बड़ी शक्ति स्वयं समय के प्रवाह में है।

२. ग्रामदान : एकजन-आन्दोलन या मात्र कार्यक्रम ?

ग्रामदान, ग्रामाभिमुख खादी और शान्ति-सेना तीनो को मिलाकर ग्राम-स्वराज्य का चित्र पूर्ण होता है । इनमें ग्रामदान बुनियाद है जिसके आधार पर खादी और शान्ति-सेना खडी होती है । ग्रामदान से गाँव सचमुच गाँव बनता है, ग्रामदान में गाँव अपने 'स्व' को पहचानता और अपनी मुक्ति की घोषणा करता है । मुक्ति किससे ? अभाव से, अज्ञान से, अन्याय से । इतना ही नही, राज्य, पूँजी तथा शस्त्र की उन तमाम शक्तियों से मुक्ति जो शिक्षण, पोषण और रक्षण के नाम से मनुष्य की रोटी, इज्जत और ईमान छीन रही हैं, उसे पगु और कुठित बना रही हैं । एक ओर जमाना मनुष्य के मन में मुक्ति की नयी उमगें भर रहा है, तो दूसरी ओर वह देख रहा है कि राज्य, जिसके सरक्षण में उसने नागरिकता की चेतना विकसित की, और शस्त्र जिससे उसने अपने को सुरक्षित समझा और पूँजी जो उसकी आवश्यकताओ की पूर्ति के लिए वैज्ञानिक उत्पादन का आधार बनी, वे तीनो शक्तियाँ आज उसके विकास के मार्ग मे सबसे जबरदस्त बाधाएँ बन रही है । इसलिए नागरिक की वास्तविक लडाई राज्यवाद, पूँजीवाद और सैनिकवाद से मुक्ति की लडाई है । ग्रामदान से गाँव इस अभियान में मुक्ति का पहला मोर्चा बन रहा है, और ग्रामसभा उसका माध्यम । इसलिए ग्रामदान एक व्यापक जन-आन्दोलन है; ऐसा कार्यक्रम नही है जिसे छोडकर शेष कार्यक्रमो को पूरा कर लिया तो बहुत बिगड़ा नही । अगर ग्रामदान के द्वारा गाँव की सामूहिक इच्छा-शक्ति न प्रकट की गयी तो दूसरे किसी कार्यक्रम के लिए कोई आधार ही नही मिलेगा ।

(क) वर्तमान स्थिति : ग्रामदान में तूफानी गति न आने के कारण

अब धीरे-धीरे हमारे इस आन्दोलन की ऐसी स्थिति बन रही है कि वह जन-आन्दोलन के करीब पहुँच रहा है । जहाँ-जहाँ ग्रामदान का काम अधिक है वहाँ नये लोग—स्वय ग्रामदानी गाँवो के लोग—सामने आ रहे हैं और धीरे-धीरे आन्दोलन की चेतना व्यापक हो रही है, फिर भी अभी तक कार्य,

कर्ता और कोष तीनो की दृष्टि से, ग्रामदान का काम मुख्य रूप से रचनात्मक संस्थाओ तथा मित्रो के ही भरोसे चल रहा है । उसे पूर्ण रूप से जन-आन्दोलन का रूप देना बाकी है । उसकी एक कसौटी यह है कि ग्रामदान ऐसे लोगो के द्वारा चले जिनकी जीविका की अलग से चिन्ता न करनी पड़े । गहराई से देखने पर हमें निम्नलिखित कठिनाइयाँ दिखाई देती हैं :

(१) विरोध : किसका, किस तरह का, किस कारण से ?

मुख्य तौर पर विरोध के पाँच स्रोत हैं—बड़े मालिक, महाजन, दलो के 'स्थानीय' नेता, सरकारी कर्मचारी, स्वय भूमिहीन । जगह-जगह इनमें से एक या एक से अधिक का विरोध—बहुत खुला नही, अन्दर-अन्दर—होता है, लेकिन जब से प्रखण्डदान की हवा बही है, बात बहुत बदलती जा रही है । अगर हम अपनी ओर से अविरोधी नीति रक्खेंगे तो विरोध कम होगा ही । हमें यह भूलकर काम करना है कि कोई हमारा स्थायी विरोधी है । हम समाज को शोषक और शोषित इन दो वर्गो में नही विभाजित करते । हमारी मान्यता यह है कि सब दूषित व्यवस्था के शिकार हैं, इसलिए मुक्ति के लिए उत्सुक हैं ।

विरोध के मुख्य कारण हैं · लिप्सा और अज्ञान । ग्रामदान किस तरह की ग्राम-व्यवस्था और समाज-व्यवस्था की कल्पना करता है, इसके बारे में सही जानकारी न रहने के कारण जो विरोध होता है उसे दूर करना हमारा काम है । सही जानकारी होने पर जब लोग आश्वस्त हो जायँगे कि सर्वोदय की व्यवस्था में 'सर्व' के लिए स्थान है, इसमें न संघर्ष है, न संहार, तो भय भी बहुत कुछ दूर हो जायगा । लोभ के कारण होनेवाला विरोध सबसे विकट है । ऐसे नये लोग जो सत्ता में घुसना चाहते हैं, या जो प्राप्त सत्ता में आज की तरह बने ही रहना चाहते हैं, या किसी-भी-तरह धन कमाकर 'बड़ा' बनना चाहते हैं वे समझकर भी नही समझते, और तरह-तरह की सिद्धान्त

की बातें करके अपने मन की बात को छिपाना चाहते हैं। ऐसे लोगों के साथ धैर्य रखने की जरूरत है। हम देखेंगे कि ग्रामदान की हवा बनती जायगी तो इनका 'कुटिल विरोध' प्रभाव खोता जायगा।

प्रखण्डदान की भूमिका में अब यह जरूरी हो गया है कि हम ग्रामदान ऊपर से शुरू करें। प्रखण्ड के प्रमुख व्यक्ति, पंचायत के प्रमुख व्यक्ति, गाँव के प्रमुख व्यक्ति—हमारे प्रवेश का यह क्रम हो। प्रवेश का यह क्रम व्यावहारिक है। अब हमें साहस करके गाँव के 'बड़ों' में घुसना चाहिए। 'बड़ों' के अनुकूल हो जाने से शेष विरोध दूर हो जायेंगे।

(२) सामान्य जनता की उदासीनता—

सामान्य जनता उदासीन है, निष्क्रिय है, निराश और निष्प्राण है। उसे किसीकी नेकनीयती में विश्वास नहीं है। उसे हालत सुधरने की आशा नहीं रह गयी है। उसे अपनी शक्ति में भरोसा नहीं है। लेकिन आन्दोलन की हवा उनकी मनोवृत्ति (ऐटीट्यूड) को प्रभावित कर रही है। ग्रामदान की दो बातों से रुख तेजी से बदलेगा। एक, बीघा-कट्ठा का वितरण और ग्रामसभा का संगठन, दो, प्रखण्डसभा की ओर से प्रखण्डस्तर पर ऐसा कोई विकास-कार्य जिसका गहरा 'इम्पैक्ट' हो। उदाहरण के लिए जिस दिन प्रखण्ड की सौ ग्रामसभाओं में से दो चार आगे निकलेंगी और आपसी सहकार से उल्लेखनीय काम कर दिखायेंगी, उस दिन जनता की आशा और विश्वास को जबरदस्त बढ़ावा मिलेगा।

(३) अपूर्णता—कार्यकर्ता की, विचार की।

संस्था के कार्यकर्ताओं की अपूर्णता का आन्दोलन पर गहरा असर हुआ है, और हो रहा है, यह स्पष्ट है। लेकिन प्रखण्डदान के सिलसिले में स्थानीय शक्ति सामने आ रही है। उसे आगे रखकर स्वयं पीछे रहने का सवाल है। हमें नये लोगों के साथ भाई चारा

कायम करने की कला सीखनी है। साथ ही हमें ऐसा कोई हुनर भी सीखना चाहिए जो जनजीवन के लिए उपयोगी हो, और जिसे लेकर हम समाज में उपयोगी सिद्ध हो सकें। लेकिन हमारा सबसे बड़ा गुण है हमारे अन्दर क्रान्ति की आग। कार्यकर्ताओं की संख्या की कमी स्थानीय लोगों से पूरी होगी, लेकिन जो संस्था के कार्यकर्ता हैं उन्हें लगन, सातत्य, बौद्धिक क्षमता और टीम-वर्क की दृष्टि से अपने में सुधार लाने के उपाय तो करने ही होंगे।

जहाँ तक विचार की व्यावहारिकता का प्रश्न है, ग्रामदान की मुख्य शर्तों का विरोध बहुत कम होता जा रहा है। ज्यादा कठिनाई स्वामित्व-विसर्जन को लेकर थी, लेकिन उसके व्यावहारिक स्वरूप को समझ लेने के बाद भय निकल जाता है। अब ऐसे लोग अधिक संख्या में मिलने लगे हैं जो कहते हैं 'इसके सिवाय दूसरा उपाय नहीं है।' कुल मिलाकर प्रश्न शर्तों का नहीं रह गया है, प्रश्न यह रह गया है कि गाँव में इतनी फूट है कि यह योजना चलेगी कैसे? यह भी है कि फूट मिटेगी तो योजना चलेगी, और योजना चलेगी तो फूट मिटेगी। एक दुश्चक्र है, इसे कहीं-न-कहीं तोड़ना है। इस दृष्टि से ग्रामदान की शर्तें सबकी शक्ति के अन्दर हैं, व्यावहारिक हैं। उनसे गाँव के जीवन की बुनियादें तो बदलेंगी ही, तात्कालिक कठिनाइयों का मुकाबिला करने की शक्ति भी आयेगी। इस बुनियादी शक्ति के अभाव में तात्कालिक समस्याओं का हल भी कैसे निकलेगा?

३. आन्दोलन की स्थिति : कुछ खास बातें

(१) जिन प्रखण्डों का दान हो गया है उनमें जल्द-से-जल्द ग्राम-सभाओं और प्रखण्डसभा का संगठन किया जाय, ताकि जनता को ग्रामदान के गर्भ से जन्म लेनेवाली सहकार-शक्ति आँखों के सामने दिखायी देने लगे। इससे ग्रामदान में विश्वास जगेगा, और यह भरोसा होगा कि हम भी कुछ कर सकते हैं।

(२) कार्यकर्ताओ का ग्रामदानमूलक प्रशिक्षण आवश्यक है, जिसका अभी अभाव है । इस दृष्टि से सस्थाएँ अपने कार्यकर्ताओ की दो टोलियाँ वना सकती हैं—एक प्रखण्डदान-अभियान के लिए, दूसरी प्रखण्डदान के बाद सघटन और विकास के लिए । विकास की टोली के हर सदस्य को कोई-न कोई ऐसा हुनर आना ही चाहिए जो ग्रामीण जीवन के लिए उपयोगी हो ।

(३) बडी सख्या मे शिविर हो—ग्रामसभाओ की ग्रामसमितियो के सदस्यो के और शान्ति-सेवक के रूप में उत्साही युवको के ।

(४) प्रखण्डदान के बाद प्रखण्ड की पूँजी से 'ग्रामदान विकास सोसाइटी' का सगठन हो जो प्रखण्ड मे विकास की जिम्मेदारी ले सके । यह स्वय प्रखण्ड सभा के अधीन हो, और इसके 'टैकनिकल कोर' के रूप में भूमिसेना (या मुक्ति सेना) का सगठन हो ।

इन कामो से प्रखण्ड की जनता को नयी आशा और विश्वास का भान होगा, और उसके सामने नये समाज का कुछ चित्र भी आयेगा ।

कुछ अन्य बातें :

१. राज्य में राज्य स्तरीय कार्यकर्ताओं का एक दल हो जो विभिन्न जिलो के आमत्रण पर प्रखण्डदान अभियान में नेतृत्व या काम कर सके । जिला स्तर पर भी टोली बन सकती है ।

२ कच्चे ग्रामदान और प्रखण्डदान रोकने के उपाय हों—'सैम्पुल टैस्टिंग' की जाय ।

३ ग्रामदान कानून की मुख्य बातें छापकर बाँटी जायें ।

४ ग्रामदान से उठनेवाले मनोवैज्ञानिक आर्थिक, सामाजिक या सास्कृतिक प्रश्नो का अध्ययन हो । आन्दोलन से समाज पर होनेवाले 'इम्पैक्ट' का विश्लेषण हो ।

ग्रामदान : पुष्टि (लोक-संगठन) : ३ :

१. निर्माण : ग्रामदान को पक्का करना—

शर्तों की पूर्ति

ग्रामदान का सामूहिक घोषणा-पत्र और व्यक्तिगत समर्पण-पत्र भरने के बाद कानूनी पुष्टि हो जाने पर गाँव के लोगों के साथ सरकार का भूमि के मामले में सम्बन्ध बदल जायगा। हर व्यक्ति का अलग-अलग खाता सरकार के पास न रहकर ग्रामसभा के पास रहेगा और सरकार के पास पूरे गाँव का सिर्फ एक खाता रहेगा। चूँकि यह भूमि के राजस्व का मामला है, इसलिए गाँव के लोगों द्वारा ग्रामदान का जो निर्णय होता है, उसे सरकार की मान्यता मिलती है। सरकारी मान्यता के लिए उसके कुछ नियम-कानून होते हैं। प्रायः हर राज्य में जहाँ ग्रामदान हो रहे हैं, ग्रामदान-कानून बन गये हैं, या बनने जा रहे हैं। सरकारी मान्यता ग्रामदानी गाँवों को तभी प्राप्त होगी जब राज्य सरकार द्वारा बनाये गये ग्रामदान-कानून की शर्तें पूरी होंगी। शर्तें पूरी हों इसके लिए ग्रामदान-कानून की शर्तों को ध्यान में रखकर ग्रामदान के संकल्प-पत्र और घोषणा-पत्र बनाये गये हैं। अखिल भारतीय स्तर पर नमूने के लिए सर्व सेवा संघ ने समर्पण-पत्र और घोषणा-पत्र तैयार किया है। (देखें परिशिष्ट २) इसलिए दोनों प्रकार के पत्रों (फार्मों) को हर तरमीम को भरना आवश्यक है।

कानूनी मान्यता मिलती है। ग्रामदान के लिए आवश्यक है कि (१) कम-से-कम इतने लोगो ने समर्पण-पत्र पर हस्ताक्षर किये हो जो गाँव के कुल निवासियो के कम से-कम ७५ प्रतिशत हो, और (२) जिनकी भूमि गाँव में रहनेवालो की गाँव में जितनी भूमि है उसकी कम से-कम ५१ प्रतिशत हो। (कई राज्यो में कम-से-कम ७५ प्रतिशत भूमिवानो का हस्ताक्षर भी आवश्यक है) समर्पण-पत्र पर कर्ता के साथ-साथ परिवार की भूमि के सभी हिस्सेदारो के हस्ताक्षर आवश्यक हैं।

प्रारम्भिक निर्माण-कार्य

ग्रामदान की घोषणा के बाद समर्पण-पत्र की तफसीलो को भरवाना, ग्रामसभा गठित करवाना और बीघा कट्ठा निकलवाना, ये प्रारम्भिक निर्माण कार्य हैं, बल्कि इन्हें निर्माण की बुनियाद कहना उचित होगा। लेकिन यह काम कौन करे ?

ग्रामदान प्राप्त करनेवाले कार्यकर्ताओ और ग्रामदान प्राप्ति की सयोजन-समितियो को, ग्रामदान की घोषणा में जो फिजा बनती है उसका लाभ लेकर, यह काम कर लेना चाहिए। इस काम मे गाँव के उन उत्साही लोगो का सक्रिय सहयोग प्राप्त करना चाहिए जिन्होने ग्रामदान कराने में विशेष दिलचस्पी ली है। पहले ग्रामसभा गठित हो, और उसके बाद ग्रामसभा ही बीघा-कट्ठा निकालने का काम करे, यह पद्धति अधिक प्रभाव कारी होगी। लेकिन बीघा-कट्ठा निकालने में देर नही होनी चाहिए। समर्पण-पत्र की शर्तें पूरी हो जाने, ग्रामसभा गठित हो जाने और बीघा-कट्ठा निकालने के बाद ही अधिकाश ग्रामदानी गाँव उस मजिल पर पहुँचते हैं, जहाँ से वे खुद विकास की दिशा में आगे बढ़ने में प्रयत्नशील हो सकेंगे।

ग्रामसभा

ग्रामदान की घोषणा के बाद ग्रामसभा का गठन ही पहला निर्माण का काम है। ग्रामदान प्राप्ति का काम करनेवाले गाँव की पहली बैठक बुलायें, उसमें गाँव की एकता के महत्त्व और चुनाव की विघटनकारी पद्धति के दुष्परिणामो को गाँववालो के सामने रखते हुए ग्रामसभा के बारे

में यह बताये कि सर्व के 'उदय' में सर्व की शक्ति को लगाने और उसे सयोजित तथा सगठित करने के लिए ग्रामसभा बनेगी। इसीलिए उस ग्रामसभा के सगठन और चुनाव में विरोध नही पैदा होना चाहिए। ग्रामसभा गाँव में बसनेवाले हर बालिग को मिलाकर बनेगी। अध्यक्ष, मन्त्री, और कार्य-समिति का चुनाव ग्रामसभा के सब सदस्यो की एकराय से होना चाहिए। गाँव के लोग चाहें तो कार्य-समिति के चुनाव की जिम्मेदारी अध्यक्ष को ही सौप सकते है, या कार्य-समिति का भी खुला चुनाव कर सकते हैं। जिसके लिए ग्रामसभा के सब लोग एकराय हो, किसीका भी विरोध न हो, वह निर्णय सर्वसम्मति से हुआ, ऐसा मानते हैं। लेकिन अगर किसी विषय में अधिकाश लोग एकराय हैं, लेकिन कुछ थोडे से लोग विरोधी है, तो विरोध करनेवालो की बात सुननी चाहिए, उनको समझाने की कोशिश करनी चाहिए, और अधिकाश लोगो की जो राय है उसे विरोध करनेवालो को समझाना चाहिए। यह प्रक्रिया समझने और समझाने की तब तक चलनी चाहिए जब तक कि विरोध खत्म न हो जाय। विरोध करनेवाले अपना विरोध वापस कर ले, भले ही अपना सक्रिय समर्थन न दें, तटस्थ ही रहें, तो भी वह निर्णय मान्य हो सकता है, इसे सर्वानुमति कहेंगे। अगर परिस्थिति और भी विकट हो और कई उम्मीदवार हो तो सर्वाधिक मत जिन लोगो को प्राप्त है, उनमें पहले, दूसरे और तीसरे नम्बर के लोगो के नाम पर लाटरी डाली जाय, और जिसका नाम आये उसे ही चुना जाय। लोग चाहे तो सबके नाम पर लाटरी डाली जाय।

जिस गाँव में जितने अधिक झगडे हो, उस गाँव में उतना ही अधिक सर्व-सम्मति का आग्रह रखा जाय। गाँव के चेतन लोगो को चाहिए कि विरोधवादी प्रवृत्ति और उसके कारणो को क्षीण करने का निरन्तर प्रयास करे। तभी गाँव की एकता अखण्डित रह सकेगी, और सबकी शक्ति एक साथ जुडकर प्रकट हो सकेगी।

सौ या सौ से अधिक जनसख्या के गाँवो की अपनी अलग ग्रामसभा बनाने की छूट ग्रामदान कानून ने दी है, यह ठीक है। यह छूट भूमिहीन

गाँवों को भी उसी तरह मिलनी चाहिए जैसे भूमिवान गाँवों को। भूमि के आधार पर भेद करना ठीक नहीं है।

ग्रामदानी गाँव के गैर-ग्रामदानी २५ प्रतिशत या उससे कम लोग ग्रामसभा के सदस्य होंगे। वे ग्रामदान में शरीक नहीं हैं, इस कारण उनके साथ दुराव नहीं होना चाहिए। अगर ये लोग ग्रामकोष में शरीक होंगे तो उसका लाभ लेंगे। बाकी प्रवृत्तियों में सबको साथ रखने पर ध्यान रहे नहीं तो तनाव बढ़ने का खतरा है। इस प्रश्न पर हमेशा सतर्क रहना चाहिए।

सरकार से कानूनी सम्बन्ध

इस सम्बन्ध में तीन बातें सामने आयी हैं :

(१) आज भी कानून के अन्तर्गत ग्रामदानी ग्रामसभाओं को पंचायत का दर्जा प्राप्त है। राजस्थान में प्रति एक हजार ग्रामदानी आबादी के पीछे पंचायत समिति में प्रतिनिधि जाता है। यह अच्छा है।

(२) ग्रामसभा गलत काम करे तो सरकार ग्रामदान बोर्ड की सलाह से 'सुपरसीड' करे तथा आगे की कार्रवाई करे।

(३) मौजूदा पंचायती राज में चुनावों को लेकर गुटबन्दी होती है। ग्रामदानी गाँवों के प्रतिनिधि इस गुटबन्दी से दूर रहें। धीरे-धीरे उसको मिटाने की ओर प्रयत्नशील हों। प्रखण्डदान से ग्रामदान और पंचायती राज के बीच की उलझनें दुरुस्त हो जायेंगी।

पार्टीबन्दी के कारण विकास-योजनाओं के लाभ से ग्रामदानी गाँव वंचित किये जा सकते हैं, क्योंकि वे किसी गुट में शामिल नहीं होंगे, लेकिन उनकी नैतिक शक्ति होगी तो यह नौबत नहीं आयेगी।

बीघा-कट्ठा

बीघा-कट्ठा निकालने के लिए अमीन कहाँ से आये, छोटे-छोटे टुक्डो को इकट्ठा कैसे किया जाय, यह एक कठिन सवाल है ।

बीघा में कट्ठा निकालने के पीछे उद्देश्य यह है कि ग्रामसमाज की एकता सुदृढ हो, गाँव में बसनेवाला हर छोटा-बडा दान की प्रक्रिया में शामिल हो, भूमिहीनो का भी गाँव की धरती से लगाव बने, और उन्हें भूमि भी मिले, इसलिए जिनके पास थोडी भी जमीन है, वे भी बीसवाँ हिस्सा अवश्य दान में निकालें । लेकिन बहुत थोडी जमीनवाले, और ऐसे लोग जिन्हें सरकारी परिभाषा मे भूमिहीन माना गया है, अपनी भूमि का बीसवाँ भाग दान में देगे तो वह बहुत छोटा टुक्डा होगा । उसे बाँटने में कठिनाई होगी । इसलिए ग्रामसभा चाहे तो (१) उस दान के हिस्से की जमीन जितनी है उसकी कीमत वसूल करे, या तो एक मुश्त में या फिर फसल पर, जब तक कि पूरी कीमत न मिल जाय, फिर उस पैसे से जमीन खरीद-कर भूमिहीनों को दे, या (२) थोडी भूमि के ऐसे मालिको को उनका हिस्सा लेकर फिर उन्हें ही वापस कर दे, या सब लोग मिलकर ऐसे लोगो को बीसवें हिस्से के 'दान' से छूट ही दे दें । (३) बडे मालिको से निवेदन करे कि गाँव में कोई भी भूमिहीन नही रहे, इसके लिए बीसवें हिस्से के अलावा कुछ अधिक भूमि का दान करे ।

बीघा-कट्ठा निकालने के लिए कागज और नाप वगैरह की जानकारी रखनेवाले अमीन की जरूरत होगी, जो सब जगह उपलब्ध नही होंगे, इस-लिए ग्रामसभा गाँव के ही जानकार लोगो की मदद से यह काम कर ले ।

बीघा-कट्ठा में प्राप्त कुल भूमि टुकडो में बिखरी होगी । वितरण मे सुविधा होगी अगर उन टुक्डो को एक चक में कर लिया जाय । इसके लिए 'बदलौन' की या और कोई पद्धति अपनायी जा सकती है । ग्रामसभा मिलकर सोचेगी तो कोई-न-कोई आपसी ढग निकाल लेगी । कई ग्रामदानी गाँवों ने यह समस्या आपसी बदलौन से हल कर ली है ।

ग्रामसभा बनाने या बीघा कट्ठा निकालने के लिए कानूनी कार्रवाई की राह देखने की जरूरत नही है । कानून के अनुसार ग्रामदान की पुष्टि जब होगी तब होगी, लेकिन उसके पहले सब काम आपसी ढग से हो सकता है, और होना चाहिए । गाँव की आपसी शक्ति ही ग्रामदान की असली शक्ति है ।

ग्रामकोष

कुल उपज, मजदूरी एव हर प्रकार की आय का हिस्सा घोषणापत्र के अनुसार ग्रामकोष में जमा किया जाय । ग्रामसभा इसे निर्धारित करने की पद्धति निश्चित करेगी । सामान्यत यह अच्छा होगा कि परिवार अपनी आय स्वय बताये, और ग्रामसभा परिवार की बात मान ले । अविश्वास से विवाद बढेगा, और विवाद से एकता टूटेगी । उत्तम व्यवस्था एव वातावरण इसमें सहायक होगा । ग्रामकोष इकट्ठा करने के क्रम मे विश्वास बढे, घटने न पाये, इसका ध्यान रखना चाहिए ।

ग्रामकोष का विनियोग

क—ग्रामकोष ग्रामसभा की स्थायी पूँजी होगी । यह रकम बहुत अधिक नही होगी जिसे विकास-कार्य पर खर्च किया जाय । इस कारण कोष हमेशा पूँजी या लागत के रूप में ही लगाया जाय । शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई आदि का कार्य चन्दा, श्रमदान या सहायता प्राप्त करके पूरा किया जाय ।

ख—ग्रामकोष १/२० हिस्सा की सीमा तक नकद पैसे में जमा रहे, शेष ऋण, स्थायी सम्पत्ति, पक्का माल या व्यापारिक लागत में लगा रहे ।

ग—स्थानीय परिस्थिति के अनुसार ऋण की मदो का आवश्यकतानुसार वर्गीकरण किया जाय एव वरीयता स्थिर की जाय, जैसे—

(१) बेकारी निवारण, कृषि की प्रारम्भिक पूंजी, कृषि-सुधार, कुटीर-उद्योग आदि;

(२) गाँव की आय के अनुसार नागरिकों के दो-तीन वर्ग किये जायँ,

(३) निम्न-वर्ग के लोगों को दवा, मकान आदि जीवन की आवश्यक वस्तुओं के लिए ऋण दिये जायँ,

(४) उत्पादन के ऋण के लिए सूद की दर कम रखी जाय तथा सूद पुनः उन्हींको आगे अपनी कृषि तथा उद्योग के विकास के लिए दिया जाय,

(५) सूद की दर में आर्थिक श्रेणी के अनुसार भेद किया जाय यानी गरीब के लिए कम, मध्यम वर्ग के लिए साधारण तथा ऊपर के वर्ग के लिए अधिक रखा जाय,

(६) गाँव के सम्पन्न लोग यदि अपनी कृषि या उद्योग के लिए ग्रामकोष से ऋण प्राप्त करना चाहते हैं, और ग्रामकोष में रुपया मौजूद है तो ऋण दिया जाय, पर ध्यान रखा जाय कि कर्ज की पूंजी से कमाये गये मुनाफे का एक भाग ग्रामकोष में वापस हो।

हिसाब किताब

ग्रामकोष गाँव में झगड़े का कारण हो सकता है, यह मानकर कोष को डाकघर या बैंक में जमा करने, दो-तीन लोगों के दस्तखत से निकालने, तथा पूरा हिसाब ग्रामसभा की मासिक बैठक में पेश करने, और समय-समय पर आडिट कराने के बारे में बहुत सतर्क रहना चाहिए। कोई काम ऐसा न हो जिससे किसीके मन में सन्देह पैदा हो। ग्रामकोष शुरू करने के पहले आवश्यक व्यवस्था कर लेनी चाहिए।

ग्रामदान पक्का कब मानें ?

ग्रामदान की घोषणा गाँव के लोगों ने कर दी तो वह गाँव ग्रामदानी

हो गया। लेकिन पंचायत के पूरे अधिकार तथा सरकार के साथ नये प्रकार के सम्बन्ध तब बनेंगे जब कानून से भी ग्रामदान पक्का (कनफर्म) हो जायगा। लेकिन इस पक्का करने की प्रक्रिया में और उसके पूरी होने में अनेक कारणों से विलम्ब हो सकता है। इसलिए ग्रामदान होने के बाद गाँव में लोग उस कानूनी कारवाई का इन्तजार किये बिना ही अपना काम शुरू कर दें। कुछ प्रारम्भिक कार्य ये हैं—

१ ग्रामसभा बनाना,
२ जमीन के बीसवें हिस्से की प्राप्ति और उसका बँटवारा,
३ पुलिस-अदालत-मुक्ति का संकल्प, गाँव के झगड़े गाँव में सुलझा लिये जायें,
४ शान्ति-सेवक-दल का सगठन,
५ ग्रामदान को ठोस बनाने के लिए गाँव के लोगों का विचार-शिक्षण—आपसी चर्चा, घण्टेभर का विद्यालय, सत्संग, शिविर आदि के द्वारा तथा सामूहिक श्रमदान, सप्ताह में, १५ दिन पर या महीने में एक दिन का, जैसा गाँव तय करे। शिविरों में पड़ोसी गाँव के लोग भी शरीक किये जायें। शान्ति-सेना-मण्डल प्रान्तीय तथा तीन-चार जिलों के मिले-जुले शान्ति-सेवा-दल के शिविरों को आयोजित करने की जिम्मेदारी ले सकता है।

ग्रामदान पक्का करने के लिए राज्य-सरकारों ने अपने-अपने ग्रामदान-कानून में अलग-अलग व्यवस्था तय की है। जिन राज्यों में भूदान-बोर्ड या ग्रामदान-बोर्ड है उन्हें ही ग्रामदान पक्का करने की जिम्मेदारी दी जाय, और इस जिम्मेदारी को वे स्थानीय सर्वोदय संगठन और रेवेन्यू विभाग के तन्त्र की सहायता लेकर पूरी करें। भूदान या ग्रामदान-बोर्ड न हो तो यह जिम्मेदारी रेवेन्यू-विभाग की मानी जाय।

ग्रामदान-संघ, स्थानीय संगठन, प्राप्ति-कार्य में योग देनेवाले अन्य व्यक्ति, सामाजिक कार्यकर्ता, भूदान-समिति, ग्रामदान-बोर्ड के कार्यकर्ता,

सबकी मदद से ग्रामदान पक्का हो । सहयोग लेने का काम प्राप्ति के कार्यकर्ता करे । 'तूफान' के साथ इस कार्य को भी बराबर का महत्त्व दिया जाय ।

२. विकास (पोषण)

अ—लक्ष्य ,

ग्रामस्वराज्य की भूमिका में ग्रामदान के बाद विकास के जो भी काम होंगे उनका लक्ष्य होगा सरकार-शक्ति के स्थान पर गाँव और क्षेत्र में सहकार-शक्ति विकसित करना । गाँव और क्षेत्र के विकास की योजनाएँ स्थानीय हो, और उनका सयोजन, सचालन स्थानीय लोक-शक्ति से हो, तो धीरे-धीरे लोक शक्ति ठोस होती जायगी और राज्य-शक्ति क्षीण होती जायगी ।

ब—विकास का चित्र

सन्तुलित और समग्र विकास की तीन मूल बुनियादे होंगी—
(१) भौतिक, (२) नैतिक, (३) सास्कृतिक ।

भौतिक विकास की योजनाओ की दो दिशाएं होगी—

(१) उत्पादन-वृद्धि

मालिक अपनी बुद्धि, महाजन अपनी पूँजी और मजदूर अपने श्रम की शक्तियो का सगठन करके दो काम करे—(क) गाँव की खेती और चालू उद्योग-धन्धो की उत्पादन-क्षमता बढाने के लिए वैज्ञानिक उपकरणो तथा काम करनेवालो के तकनीकी प्रशिक्षण की व्यवस्था ताकि कमाई बढे, तथा (ख) गाँव के हर आदमी को रोजगार मिले ताकि गाँव में किसीको भूखा-नगा न रहना पड़े । इसके लिए गाँव में नये उद्योग-धन्धा की शुरुआत हो । कोशिश यह हो कि धीरे-धीरे सबकी उत्पादन-क्षमता बढे और सबको सन्तुलित आहार और सबके जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओ की पूर्ति होने लग जाय । पीने लायक पानी पर तत्काल ध्यान दिया जाय ।

(२) शोषण-मुक्ति

शोषण-मुक्ति के लिए आर्थिक क्षति को सबसे पहले रोकना होगा। आर्थिक क्षति को रोकने के लिए ऋण-मुक्ति (सूद की अपरिमित दरें, गिरवी भूमि, उत्पादन का उचित मूल्य न मिलना, बाजार से पूरी होनेवाली आवश्यकताओ का मनमाना मूल्य—इन सब प्रकार की परिस्थितियो से मुक्ति की योजना), नशामुक्ति, कुप्रथाओ (जिनके कारण व्यर्थ का खर्च होता है और गाँव के लोग कर्जदार बनते हैं, जैसे—शादी, श्राद्ध आदि के मौके पर होनेवाले फालतू खर्च) का निरसन, पुलिस-मुक्ति, अदालत-मुक्ति (गाँव की रक्षा के लिए शान्ति-सेवा-दल का सगठन, गाँव के झगडो का गाँव में ही सुलझाना), आदि कार्यक्रम लेने होगे। ध्यान इस ओर रहे कि (क) जीविका की सुरक्षा हो—अनिश्चितता दूर हो, (ख) कमाई का कुछ अश पूँजी के लिए बचे, (ग) एक गाँव द्वारा दूसरे गाँव का शोषण न हो।

नैतिक तथा सांस्कृतिक विकास : मुख्य आधार

(क) गाँव का सामूहिक अभिक्रम जागृत हो, तथा सरकार-शक्ति की जगह सहकार-शक्ति और दण्ड-शक्ति की जगह सम्मति-शक्ति का विकास हो।

(ख) सर्व-सम्मति और सर्वानुमति की मानसिक भूमिका बने और सामूहिक निर्णय की शक्ति पैदा हो।

(ग) एक दूसरे की चिन्ता हो। पडोसी से तथा पूरे गाँव से पारिवारिकता का विकास, पड़ोसी गाँवो और उससे आगे के वर्तुलो के साथ हितैक्य की दिशा में बढना; व्यक्तिगत या पारिवारिक हित और गाँव तथा समाजहित में व्याप्त विरोध की समाप्ति।

(घ) सर्व के उदय की योजना बने, विषमता वर्ग-निराकरण की कोशिश हो, तथा शोषण और शासन-मुक्ति की दिशा में व्यवस्था-परिवर्तन हो।

(च) मौलिक विकास तभी सार्थक है जब उससे मनुष्य का सास्कृतिक विकास हो । जिस भौतिक विकास का ठोस सास्कृतिक आधार नही होगा उससे मनुष्य की मनुष्यता नही प्रकट होगी ।

समग्र चित्र

क—सबके अभाव की पूर्ति के कार्यक्रम बनाये जायँ, जिनमें प्रयत्न किया जाय कि—

१. गाँव की भूमिहीनता मिटे । बीघा-कट्ठा में दान की भूमि, सामूहिक तथा सरकारी भूमि भूमिहीनो को कास्त के लिए मिले, अधिक भूमिवालो से भूमिहीनो के लिए दान माँगा जाय ।

२. गाँव में जो भी उद्योग-धन्धे शुरू किये जायँ उनमें प्राथमिकता अन्तिम व्यक्ति को दी जाय ।

३. सबको काम और श्रम का उचित मूल्य मिले ।
गाँव का हर व्यक्ति अपना खुद का विकास महसूस करे; सामुदायिक विकास के नाम पर व्यक्ति की उपेक्षा न हो ।

ख—गाँव में आपसी सहकार का वातावरण बने, सामूहिक रूप से कुछ करने का अभ्यास हो । सामूहिक सुरक्षा की परिस्थिति का निर्माण हो, इसके लिए—

१. थोक व्यापार, उद्योग और 'क्रेडिट' का ग्रामीकरण हो ।

२. सामूहिक योजनाओ में साधन और पूँजी के साथ ही श्रम को भी बराबरी का स्थान दिया जाय [गाँव के दायरे में श्रम को करेंसी मानकर काम हो सके, ऐसी कोशिश हो]

३. सहकारी उत्पादन में औसत के बाद के अतिरिक्त उत्पादन का अधिक भाग श्रमिक को मिले, यह तथा इसी प्रकार की दूसरी कोशिशें करनी होगी ।

ग—गाँव के भीतरी और बाहरी हित-विरोध समाप्त हो, और 'सर्वहित'

की भावना और परिस्थिति बने इसकी कोशिश निरन्तर करनी होगी, यथा—

१ भूमि का बीसवाँ हिस्सा निकालने, बाँटने, ग्रामसभा में सर्व सम्मति का तत्त्व दाखिल करने जैसे नये मूल्यों की स्थापना के कार्यक्रम से हित विरोध घटेंगे ।

२ परस्पर विश्वास तथा निर्भयता का वातावरण बनाकर ऐसी परिस्थिति लायी जाय कि अन्तिम व्यक्ति भी अपनी बात खुलकर कह सके ।

३ जीवन को उदात्त मूल्यों की ओर ले जाने के शैक्षणिक कार्यक्रम का निरन्तर प्रयास, और अभ्यास हो ताकि लोगों का संस्कार सुधरे, और चिन्तन का स्तर ऊँचा उठे ।

विकास की योजना, संगठन, पूँजी

१ उद्योगों के प्रकार के अनुसार योजना परिवार, गाँव और क्षेत्र को 'युनिट' मानकर बनेगी क्योंकि कुछ उद्योग पारिवारिक स्तर पर, कुछ ग्राम स्तर पर, कुछ क्षेत्र-स्तर पर चलेंगे । उससे आगे राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय उद्योग भी चलेंगे ही । लेकिन योजना की प्रमुख इकाई गाँव ही होगी । योजना ऐसी हो जिसमें हर परिवार शरीक हो सके ताकि अन्तिम परिवारों की उपेक्षा न हो । लक्ष्य एक समग्र ग्राम योजना का विकास रहे ।

२ विकास के काम के लिए 'ग्रामदान समिति' या 'ग्रामदान-संघ' का संगठन हो । ग्रामदान-संघ या ग्रामदान विकास-समितियों के संगठन का यह सिलसिला राज्य और राष्ट्रीय स्तर पर भी किया जाय ।

३ योजना गाँव की, साधन समाज का और प्रशिक्षण संस्था का इस तरह ग्रामदानी गाँवों के विकास की समन्वित योजना होगी ।

सरकारी, अर्ध-सरकारी, गैरसरकारी सस्थाओ से साधन तथा प्रशिक्षण की सहायता प्राप्त करने के लिए सम्पर्क-समितियो का सगठन ग्रामदान-प्राप्ति-समिति अथवा निर्माण-समिति द्वारा किया जा सकता है। यह सगठन उन सस्थाओ के सामने ग्राम-विकास का क्रमिक चित्र पेश करे और सहायता के लिए प्रेरित करे।

४ लेकिन ग्रामदान विकास समिति या ग्रामदान सघ दूसरो की सहायता पर ही निर्भर न रहे, बल्कि विकास-कार्य के लिए गाँव में उपलब्ध साधनों और व्यक्तियो की क्षमता को ही अपना आधार बनाये। सुझाव के तौर पर—

क—गाँव या क्षेत्र के पुराने अनुभवी और निवृत्त व्यक्ति गाँव के शिविरो में बुलाये जायें या लोग उनके पास जायें और उनके अनुभव तथा विशिष्ट ज्ञान का लाभ उठायें।

ख—व्यापार का ग्रामीकरण हो। ग्राम-भण्डार के सगठन द्वारा गाँव में जो उत्पादन होता है उसे उचित मूल्य मिले और प्राथमिक बुनियादी आवश्यकताओ की पूर्ति के सामान गाँव में उचित दरो पर उपलब्ध हो, यह प्रयास किया जाय। गाँव में 'प्रोसेसिंग इडस्ट्री' शुरु की जाय।

ग—स्थानीय साधनो से खाद तैयार करने का व्यापक अभियान चलाया जाय और अच्छे बीज प्राप्त करने और बाँटने का काम प्रखण्ड स्तर पर हो।

घ—सामूहिक श्रमदान का आयोजन हो। सरकार की विकास-योजना के विभाग से उस श्रमदान द्वारा जो निर्माण-कार्य हो उसका मूल्याकन करके, सहायता प्राप्त की जाय और उसका पूरा या एक अश गाँव की विकास-योजना में लगाया जाय।

५ ग्रामदानी गाँवो के विकास के लिए राष्ट्रीय और अन्तरराष्ट्रीय

स्तर पर साधन तथा विशेषज्ञों की सहायता प्राप्त करने के लिए सगठन खड़े किये जायँ। सर्व सेवा सघ तथा 'अवार्ड' इस दिशा में प्रयत्नशील हों।

ग्रामदानी गाँव के शिक्षण की योजना

मुक्ति की घोषणा (ग्रामदान)

ग्रामसभा

सेवक समिति के ७ सदस्य तथा ग्रामसभा के कुछ अन्य उत्साही व्यक्ति

२ तकनीकी प्रशिक्षणार्थी

(शिविर-पद्धति) ←—— लोक-शिक्षण ——→ (विद्यालय-पद्धति)

(शिविर-पद्धति)	(विद्यालय-पद्धति)
तीन दिन से सात दिन के शिविर—४ घण्टे रोज। प्रति तीन महीने पर शिविर।	६ महीने या १ साल का अभ्यासक्रम— अम्बर से डेढ़ से दो रुपया रोज कमाने की क्षमता हो जाय।
अभ्यासक्रम	अभ्यासक्रम
(१) ग्रामसभा का सगठन—	(१) वस्त्रोद्योग—
(क) घोषणा-पत्र तथा सकल्प और समर्पण - पत्र भराना, बीघे - कट्ठा निकालना, ग्रामकोष का सग्रह और विनियोग,	(क) कपास खेती, ओटाई, धुनाई, सादा चरखा, अम्बर, बुनाई,
(ख) सर्वसम्मति, सर्वानुमति की पद्धति;	(क्षेत्रीय आधार पर

(ग) बैठकों की कार्यवाही-पुस्तिका, विवरण, प्रतिवेदन आदि।

(२) गाँव का विकास—

(क) सर्व की सम्मति, सर्व की शक्ति, सर्व का हित—एकता और समता, भेदों और विरोधों का शान्तिपूर्ण हल, चुनाव और दलबन्दी के दोष।

(ख) गाँव की योजना, गाँव की बुद्धि, श्रम, पूँजी का समोजन, बाहरी मदद, श्रम-सहकार, हिसाब-किताब, विवरण, कहाँ से शुरू करें?

(ग) उत्पादन-वृद्धि, खेती, खादी, अन्य उद्योग।

(घ) शोषण-दमन-मुक्ति।

(च) स्वस्थ पारिवारिक जीवन,

(छ) संघर्षमुक्त सामाजिक सम्बन्ध।

(३) गाँव का अपने क्षेत्र, जिले, राज्य और देश में

लघु सरजाम, छपाई, फाजिल कपड़े की बिक्री)

(ख) सूत का अर्थ, सूत की खरीद, सूत की बदलौन, बुनकर की बाँट, बिक्री,
हिसाब किताब।

(२) प्रारम्भिक उपचार।

(३) सफाई-कुँआ, टट्टीघर, पेशाबघर।

(४) झगड़ों का शान्तिपूर्ण निबटारा।

(५) गृह-वाटिका

(६) डायरी लिखना, दूसरा को विचार समझाना, ग्रामशाला चलाना।

स्थान—दुनिया से नाता, दूसरी संस्थाओं, दूसरे गाँवों, और सरकार से सम्बन्ध।

(४) पड़ोस में ग्रामदान की प्राप्ति-पंचायत, ब्लाक, जिला, राज्य, देश के स्तर पर ग्रामदान का संगठन।

(५) गाँव की भूमिका में सबका।। लोकतन्त्र, सबका समाजवाद।

नोट अभ्यासक्रम में क्रमशः और बातें जुड़ती जायेंगी।

खादी-ग्रामोद्योग

खादी-ग्रामोद्योग द्वारा समाज का सम्पूर्ण आर्थिक ढाँचा बदलना है, इसलिए जातिगत पेशे के कारण उपलब्ध पारस्परिक कुशलता का मोह त्यागना चाहिए। और, नयी कृषि-औद्योगिक-विकेन्द्रित वैज्ञानिक आर्थिक रचना की भूमिका मे काम करना चाहिए।

(इस विषय पर सर्व सेवा संघ की खादी-ग्रामोद्योग समिति के सुझाव मान्य किये गये। देखे परिशिष्ट–१)

३. शान्ति-सेना (रक्षण)

ग्रामदान की घोषणा करके गाँव के लोग शान्ति की दिशा मे बढ़ना शुरू करते है। ग्रामदान की घोषणा के लिए जो आयोजन हो उसमें, या दूसरे उपयुक्त अवसरो पर ग्रामदानी गाँवो के लोग पीला साफा बाँधें तो शान्ति की हवा बनेगी।

१. शान्ति-समिति

ग्रामसभा सुरक्षा, सहकार और सम्मति की शक्ति विकसित करने के लिए एक शान्ति-समिति संगठित करे। शान्ति-समिति ग्रामभावना के

विकास के लिए प्रयत्नशील हो। शान्ति-समिति इस दिशा में विशेष रूप से प्रयत्न करे कि गाँव में पुलिस-अदालत का प्रवेश न हो, गाँव के झगड़े गाँव में ही सुलझा लिये जायें।

२. *शान्ति-सेवा-दल*

शान्ति-समिति गाँव के युवकों का संगठन करे, उसके लिए योग्य प्रशिक्षण की व्यवस्था हो। शान्ति-सेवा-दल गाँव में अशान्ति पैदा होनेवाली परिस्थिति में शान्ति-स्थापना का काम करे। सुरक्षा के लिए आवश्यक हो तो पहरा दे, प्रतिदिन एक घण्टा या सप्ताह में चार घण्टे गाँव के लिए श्रमदान का कार्यक्रम आयोजित करे।

ग्रामदान-प्राप्ति का काम करनेवाले शान्ति-सैनिक बनकर काम करें, उनके कार्यों में सुव्यवस्था तथा अनुशासन हो। हर ग्रामदानी गाँव में कम-से-कम १० शान्ति सेवक (या शान्ति सैनिक) बनाये जायें।

३० जनवरी को शान्ति-समिति, शान्ति-सेवा-दल और शान्ति-सैनिक मिलकर शान्ति-स्थापना का सकल्प दुहरायें।

४. अन्य (विशेष बातें)

(अ) गोष्ठी के कुछ सुझाव

१. आन्दोलन की ओर जन-समुदाय का ध्यान आकर्षित करने के लिए शान्ति की 'इमेज' को प्रस्तुत करना अत्यन्त आवश्यक है। ग्रामदान-मूलक-शान्ति की 'इमेज' कार्यकर्ता समाज के सामने रख सकें, इसके लिए उनका योग्य प्रशिक्षण होना चाहिए जिसके लिए राज्य से लेकर जिला या प्रखण्ड स्तर तक के कार्यकर्ताओं के शिक्षण-शिविर देश में आयोजित किये जायें।
२. विचार-पुष्टि के लिए ऐसे कार्यकर्ता जो ग्रामदान-मूलक शान्ति की पूरी 'इमेज' प्रस्तुत करने की क्षमता रखते हों, ग्रामदानी गाँवों में सघन लोकशिक्षण की यात्राएँ करें।
३. ग्रामदान-आन्दोलन के शान्ति-दर्शन की संक्षिप्त लेकिन सम्पूर्ण

सिद्धान्तो का प्रतिपादन करनेवाली पुस्तिका तथा कार्यकर्ताओ के लिए एक 'ग्रामदान-मैनुअल' सर्व-सेवा-सघ तैयार कराये ।

४. ग्रामदान की विशिष्ट आवश्यकताओ को ध्यान में रखते हुए 'ग्रामदान ओरियेन्टेड ट्रेनिंग' की पूरी योजना सर्व-सेवा-सघ तैयार करे और खादी-ग्रामोद्योग आयोग को भेजे ।

५. 'अखिल भारत ग्रामदान-सहकारी परिषद्' का सगठन किया जाय ।

(ब) गोष्ठी की चर्चा में से निकले हुए विशेष अध्ययन व शोध के कुछ विषय

१. सर्वसम्मति और सर्वानुमति की पद्धति, प्रक्रिया का शोध हो ।

२. ग्रामदानी गाँवो में श्रम को पूँजी में बदलने की प्रक्रिया क्या हो ?

३. ग्रामदान-तूफान की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रियाओ और समाज पर उसके 'इम्पैक्ट' का अध्ययन किया जाय ।

४. 'रिसोर्सेज', 'डिमान्ड', 'लेबर' तीनो को जोड़ने का तरीका क्या हो ?

(स) प्रयोग व चिन्तन के कुछ पहलू

१. ग्रामसभा कोई गलत निर्णय ले तो उसे कौन रोकेगा ? सरकार-शक्ति, क्षेत्रीय सगठन, कार्यकर्ता या गाँव में ही कोई ऐसी तटस्थ शक्ति ?

२ ग्रामदानी गाँवो के युवको का प्रशिक्षण—ग्रामसभा के सचालन, ग्रामकोष की व्यवस्था आदि के लिए 'सिलेबस', सगठन, सचालन ।

३. शान्ति-सेना ३० जनवरी को शान्ति के लिए सामूहिक रूप से सकल्प दुहराये; संकल्प क्या ?

अगली गोष्ठी में मुख्य रूप से गाँव की आर्थिक रचना, प्रखण्डदान, ग्रामदान में दण्ड, अन्याय का प्रतिकार, सगठन, उद्योग, उत्पादन, मुद्रा, विनियोग और परिवार-नियोजन पर सविस्तार चर्चा हो ।

●

खादी समिति के सुझाव

पू० विनोबाजी को खादी के वर्तमान कार्यक्रम से सन्तोष नहीं है। वे खादी के वर्तमान स्वरूप और काम करने के ढग को, बदल देना चाहते हैं। बुनाई-छूट तथा त्रिविध कार्यक्रम के निर्णय को स्वीकार कर लेने के बाद भी खादी की पटरी नहीं बदली है, और न दिशा-परिवर्तन ही हुआ है, ऐसा उन्हें लगता है। दूसरी तरफ खादी की बिक्री उत्पादन के अनुपात में न होने के कारण सस्थाओ की पूंजी स्टाक में फँसती जाती है और सस्थाओ के लिए स्टाक को निकालने की समस्या बनती जा रही है। सस्थाओं को इस दिक्कत से निकालने के लिए तथा उनके उत्पादन के कार्यक्रम को अक्षुण्ण रखने के लिए कमीशन ने निश्चय किया था कि सस्थाओ के उत्पादन का २५ प्रतिशत तक सूत सरकार को दे दिया जाय।

कमीशन के सदस्यो ने इस प्रश्न पर तथा इससे सम्बन्धित दूसरे कई प्रश्नो पर विनोबाजी से वार्तालाप किया। विनोबाजी के साथ गहराई से चर्चा हुई ? इस बातचीत में स्पष्ट हुआ कि विनोबाजी को सरकार को सूत देनेवाला निर्णय पसन्द नहीं आया। उन्होंने यह भी जाहिर किया कि बिना खादी का वर्तमान स्वरूप बदले खादी का भविष्य सुरक्षित नहीं है। जब तक खादी को जनता का सरक्षण नहीं मिलेगा, तब तक केवल सरकार के सरक्षण पर खादी चलनेवाली नहीं है। जनता का सरक्षण मिले इसके लिए खादी के काम की दिशा को बदलना ही होगा।

अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग बोर्ड ने विनोबाजी के इस विचार को स्वीकार किया, और श्री रामचन्द्रन्, श्री देवकरण सिंह तथा श्री सोमदत्त

की एक उपसमिति बनायी जिसे इस प्रश्न पर विचार करना था कि वर्तमान काम के स्वरूप में क्या-क्या परिवर्तन किये जायें, जिससे पू० विनोबाजी द्वारा निर्दिष्ट कार्यक्रम को अपनाया जा सके।

उपसमिति ने उपरोक्त प्रश्न पर विचार किया, तथा कुछ सुझाव रखा, जो निम्न प्रकार है—

(१) चर्चा में यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि खादी का वर्तमान काम संस्थागत काम है उसका स्वरूप बदलकर ग्रामगत हो जाना चाहिए। यानी आज तक संस्थाएँ अपने काम के योगक्षेम की चिन्ता [illegible] वे कार्यक्रम बनाती हैं कि काम कहाँ फैलाना, किस प्रकार [illegible] आदि। अपने उत्पादन को किस प्रकार बेचना यह प्र[illegible] चिन्ता रहती है। इस सारे कार्यक्रम का विचार तथा उसकी [illegible] एकमात्र संस्थाओं की चिन्ता का विषय रहता है।

लेकिन भविष्य में ग्राम-ग्राम में ग्रामसभाएँ बनायी जायें। उन्हें प्रेरित किया जाय कि उनके क्षेत्र में चलनेवाला या आगे चलाया जानेवाला कार्यक्रम उनका खुद का कार्यक्रम हो। इस काम की बाबत उन्हें ही सोचना है, उन्हें ही क्रियान्विति भी करना है। अब गाँव की जरूरत का कपड़ा बनाने के लिए आवश्यक चरखा चलाना, उस सूत को बुनवाना, तथा उत्पादन को गाँव में खपा लेना, यह सारा कार्यक्रम ग्रामसभा का रहेगा। खादी-संस्थाएँ इस कार्यक्रम में निष्णात हैं इसलिए उनसे सहायता के रूप में तकनीकी मार्गदर्शन ग्राम[illegible] को मिलेगा।

(२) इस प्रकार का कार्यक्रम देश के कुछ भागों में चल भी रहा है। तमिलनाड सर्वोदय संघ तथा सौराष्ट्र के चलाला में इन्हीं आधारों [illegible] काम चल रहा है। समिति ने सुझाया कि इस प्रकार के कार्यक्रम जहाँ-जहाँ चल रहे हैं वहाँ-वहाँ की विस्तृत जानकारी सब संस्थाओं को दी जाय।

इस जानकारी को देने के साथ-साथ कुछ प्रमुख कार्यकर्ताओं की २-२, ४-४ की टोलियाँ बनाकर सर्वत्र भेजी जायें। ये टोलियाँ राज्यों की हर कमिश्नरी में जायें जहाँ खादी-काम होता है। ये टोलियाँ राज्य की कुल संस्थाओं से एकत्र न मिलकर एक-एक कमिश्नरी की संस्थाओं से मिलें। उन्हें विनोबाजी का यह विचार समझायें तथा उनके सामने सारा कार्यक्रम प्रस्तुत करें और उन्हें अपने ग्राम को नयी दिशा देने में प्रेरित करें।

इन टोलियों का चयन खादी समिति शीघ्र ही करे तथा खादी इनके प्रवास-व्यय की व्यवस्था करे।

(३) खादी-काम को ग्रामसभाओं द्वारा अपना लिये जाने के उद्देश्य की क्रियान्विति के लिए निम्न कार्यक्रम बन जाना चाहिए। हर संस्था अपने अन्तर्गत कुल ग्रामों में से :—

प्रथम वर्ष में	५ प्रतिशत गाँवों में,
द्वितीय वर्ष में	१० प्रतिशत गाँवों में,
तृतीय वर्ष में	१० प्रतिशत गाँवों में

ग्रामसभा बना दे और उन्हें अपना काम सौंप दे। ग्रामसभा काम को स्वीकार करती है, इसके सबूतस्वरूप उसको अपने ग्राम के उत्पादन का अमुक प्रतिशत अपने यहाँ खपाने का भी संकल्प लेना होगा।

(४) यह भी वांछनीय समझा गया कि ग्रामसभा तथा खादी-संस्थाओं द्वारा अपने कार्यक्रम के साथ-साथ कृषि, गोपालन तथा ग्रामोद्योगों का संयुक्त कार्यक्रम बनाया जाना भी उपयोगी होगा। ग्रामोद्योगों में रेशा-उद्योग, चर्मोद्योग, तेलघानी, गुड़ खांडसारी उद्योग तो प्रायः सार्वत्रिक चल सकते हैं। इनके अलावा धान-कुटाई उद्योग भी बहुत-से क्षेत्रों में चल सकता है। चूना-उद्योग तथा ईंट-भट्ठा आदि भी जहाँ-जहाँ सम्भव हो चलाये जा सकते हैं, ग्रामों में चलनेवाले बढ़ईगिरी व लोहारगिरी के उद्योग को संशोधन द्वारा

स्वीकृत सरंजाम कार्यालयके अन्तर्गत ले लिया जाना चाहिए, ताकि ग्राम की जरूरत की पूर्ति हो सके।

(५) (क) उपसमिति की यह भी सिफारिश है कि भविष्य में पारम्परिक चरखे के स्थान पर अम्बर-चरखे पर ज्यादा जोर दिया जाय। जहाँ पारम्परिक चरखा देना भी हो वहाँ भी १ तकुआ २ तकुआ का अम्बर चरखा ही दिया जाय। उससे उत्पादन बढ़ने की वजह से कत्तिन की आमदनी बढ़ेगी तथा सूत की मजबूती की वजह से बुनाई में सुविधा होगी व कपड़े का पोत सुधरेगा। इससे खादी की कीमत कम करने में सहायता होगी।

(ख) भविष्य में खादी-संस्थाएँ सुधरे औजार ही देंगी—चाहे चरखा देना हो चाहे करघा। पुराने अविकसित अनुन्नत औजार बिलकुल नहीं दिये जायँगे, ताकि उत्पादन की क्षमता व गुणवत्ता में सुधार हो।

(ग) अम्बर चरखे पर आज दिया जानेवाला रिबेट नाकाफी है, वह बढ़ाया जाना चाहिए।

(घ) अम्बर चरखे की कताई के लिए अभी तक कत्तिनों को पट्टे दिये जाते रहे हैं। समिति की सिफारिश रही कि भविष्य में उन्हें टेप ही दिया जाय और प्रयत्न किया जाय कि कताई भी विभक्त प्रक्रियाओं द्वारा हो। टेप देने से एक प्रक्रिया की बचत होगी। विभक्त कताई होने से कताई की मजदूरी बढ़ जायगी।

(ङ) अम्बर चरखों का और विस्तार किया जाय। इस प्रकार अम्बर तथा पारम्परिक सूत का पूलिंग किया जाना चाहिए। दोनों का पूलिंग कर देने से सूत की कीमत कम हो जायगी।

अम्बर व पारम्परिक सूत का अनुपात क्रमशः ५०-५० का हो जाय। यह अनुपात अधिक-से-अधिक ३ साल में कर लिया जाय। जहाँ अम्बर-कार्यक्रम पूरा चल रहा है वहाँ पर भी १० प्रतिशत अम्बर हर साल बराबर बढ़ाते रहना चाहिए।

(च) इस समय संस्थाओं द्वारा काम चलने के कारण उत्पादन पर व्यवस्था-खर्च बहुत बढ जाता है। यह व्यवस्था-खर्च कम-से-कम हो यह आवश्यक है। उपसमिति की राय रही कि यदि ग्रामसभा अपने ग्राम में से किसी उपयुक्त व्यक्ति को इस काम का शिक्षण देकर उसकी मार्फत काम करवाये तो व्यवस्था-खर्च मे काफी कमी हो जायगी और इस प्रकार ग्राम को अपने उत्पादन पर ज्यादा व्यवस्था-खर्च नही करना पडेगा।

(छ) रेडीमेड वस्त्रो की प्राप्ति का भी प्रबन्ध हो। दूसरे राज्यो की व उत्पादन-केन्द्रो की खादी सुलभ करने की व्यवस्था हो।

(ज) छपे पोस्टर आदि से मुफ्त बुनाई की जानकारी अधिकाधिक गाँवो में दी जाय।

(झ) हर स्थान पर स्थानीय बुनाई खडी की जाय। हर ब्लाक में कम से-कम एक बुनाई-केन्द्र अवश्य हो। पहले वर्ष में ही सूत का १० प्रतिशत स्थानीय व्यवस्था से बुना जाय।

(ञ) बुनाई-केन्द्रो का विस्तार हो इसके लिए आवश्यक है कि बुनाई का प्रशिक्षण दिया जाय व नये-नये बुनकरो के पुनर्वास का भी प्रबन्ध किया जाय। कई जगह नये बुनकर बुनाई का प्रशिक्षण लेना चाहते हैं। ऐसे लोगो को अपने मकान में खड्डी आदि लगाने के लिए जो मरम्मत आदि करनी पडती है उसे भी पुनर्वास ही मानना चाहिए और उसके लिए पुनर्वास की सहायता दी जाय।

(ट) स्थानीय खपत के लिए बदलौन किया जाना आवश्यक है और बदलौन में बुनाई छूट पूरी-पूरी मिलनी चाहिए तथा व्यवस्था-खर्च भी पूरा ही मिलना चाहिए। इस समय मानक बुनाई से अतिरिक्त बुनाई खादी को देनी होती है तथा व्यवस्था-खर्च भी पूरा देना होता है। इस कारण बदलौन की खादी महँगी हो जाती है।

(१) आजकल हर राज्य में खादी के भावपत्रक एक जैसे ही

बनाये जाते हैं। जिन गाँवों में स्थानीय खपत के लिए खादी बुनाई हो वहाँ का भावपत्रक वहाँ की स्थिति के अनुसार बनाया जा सकेगा। वहाँ के लिए सारे 'जोन' का भावपत्रक एक जैसा हो यह बन्धन नहीं होगा।

(७) खादी काम का बराबर विस्तार हो रहा है। इस विस्तार में यह ध्यान रखना होगा कि ६ अप्रैल, १९६६ के बाद नये पारम्परिक चरखे न बढ़ाये जायें। यह केवल व्यापारिक खादी उत्पादन के लिए ही है। स्वावलम्बन के लिए पारम्परिक चरखा चलाया जा सकता है। एक विचार यह भी था कि इस प्रकार के पारम्परिक चरखे पर रिबेट देना ही बन्द कर दिया जाय। स्वावलम्बन के साथ-साथ कमीशन द्वारा प्रतिपादित 'वीकर-सेक्शन' व 'हिलवार्डर एरिया' में पारम्परिक चरखे पर यह रोक नहीं होगी।

(८) यह भी वाछनीय समझा गया कि बड़ी संस्थाओं का विकेन्द्रीकरण हो। इस समय कई स्थानों पर छोटी संस्थाएँ भी बन रही हैं। सामान्यत छोटी संस्था का कार्यक्षेत्र एक ब्लाक लिया जाना चाहिए।

सारी चर्चा करके यह भी सोचा गया कि अब २५ हजार गाँवों में सघन विकास का कार्यक्रम अपनाया गया है। इस कार्यक्रम को ऊपर लिखे तरीके से ही यानी ग्रामसभा के माध्यम से ही चलाया जाय। पुराना तरीका इन गाँवों के विकास के लिए बिलकुल न अपनाया जाय। ●

परिशिष्ट : २ (अ)

ग्रामदान का सामूहिक घोषणा-पत्र

हम जिला ... अंचल (या विकास खण्ड) ... थाना (तहसील) ... पंचायत ... ग्राम ... के निवासी संत विनोबाजी द्वारा प्रवर्तित ग्राम-स्वराज्य के विचार को अच्छी तरह से समझ-बूझकर अपने गाँव के लिए ग्रामदान करते हैं और इस उद्देश्य के निमित्त —

१ हम अपनी कृषि-योग्य भूमि की कम-से-कम पाँच फीसदी अर्थात् बीसवाँ हिस्सा भूमि अपने गाँव के भूमिहीन भाइयों के लिए देते हैं। भूमिहीनों को भूदान द्वारा हमने पूर्व बाँटी हुई जमीन इसमें शामिल कर ली जायगी।

का तीसवां हिस्सा जहाँ स्पष्ट न हो वहाँ ग्रामसभा वह हिस्सा तय करेगी, जैसे—व्यापार की आय, व्यापार की कुल आमदनी नही बल्कि आमदनी का वह भाग माना जायगा जो मालिक के हिस्से में रहता हो) अथवा आगे जो भी ग्रामसभा तय करे, नकद या श्रम के रूप में ग्रामसभा को देंगे ।

इस प्रकार जो पूंजी बनेगी उससे गाँव की भलाई और विकास का कोई भी कार्य जो ग्रामसभा समय-समय पर तय करे, किया जा सकेगा । इस प्रकार के सारे कामो में सदैव उन लोगो की भलाई को पहले ध्यान में रखा जायगा जो ज्यादा जरूरतमन्द या असहाय हो ।

४ गाँव के प्रत्येक वयस्क को सम्मिलित कर हम ग्रामसभा का गठन करेंगे । वह ग्रामसभा ग्राम-माता की तरह गाँव में सब लोगो की देखभाल करेगी । ग्रामसभा का सचालन सर्वसम्मति अथवा सर्वानुमति से होगा ।

विशेष सूचना ग्रामदान की घोषणा निम्न शर्तें पूरी होने पर ही की जा सकती है —

१ गाँव में रहनेवाले भूमिवानो मे ७५ प्रतिशत भूमिवानो के हस्ताक्षर प्राप्त हुए हो ।

२ गाँव में रहनेवाले भूमिवानो की गाँवो में जो जमीन हो उसमें से कम-से-कम ५१ प्रतिशत भूमि ग्रामदान में शामिल हुई हो ।

३ गाँव में रहनेवाले कुल बालिगो में से ७५ प्रतिशत ग्रामदान में शामिल हुए हो ।

फार्म

क्रम-संख्या	पूरा नाम	जमीन का रकबा (अन्दाज से)	धन्धा	हस्ताक्षर

गाँव की जानकारी

१ गाँव में रहनेवाले भूमिवानो की जोत की गाँव में कुल भूमि (अन्दाजन)

२ गाँव में रहनेवाले जमीन के मालिको की सख्या

३ गाँव में रहनेवाले वालिगो की संख्या

४ ग्रामदान में शामिल जमीन का रकवा

५ ग्रामदान मे शामिल जमीन के मालिकों की सख्या

६ ग्रामदान में शामिल अन्य वालिगो की सख्या

७ घोषणा-पत्र भरानेवाले टोली-नायक का नाम व पता

८ ग्रामदान की घोषणा की तिथि ।

परिशिष्ट : २ (आ)

ग्रामदान का व्यक्तिगत समर्पण-पत्र

मैं जिला अचल (विकास खंड)
थाना (तहसील) पचायत ग्राम
का निवासी संत विनोबाजी द्वारा प्रवर्तित ग्राम-स्वराज्य का विचार अच्छी तरह समझ-बूझकर ग्राम की मेरे खाते की कुल जमीन की मालकियत ग्राम-सभा को समर्पित करता हूँ।

१ मैं अपनी कृषि-योग्य भूमि का कमसे-कम पाँच फीसदी अर्थात् बीसवाँ हिस्सा भूमि अपने भूमिहीन भाइयो के लिए देता हूँ।

२ भूमिहीनो के लिए (कम-से-कम पाँच फीसदी) भूमि निकाल देने के बाद जो जमीन हमारे पास रहेगी उसे काश्त करने का हक हमें रहेगा, तथा हमारे उत्तराधिकारियो को रहेगा। ग्रामसभा की अनुमति से हम इस जमीन को सरकार तथा सहकारी समिति को कर्ज के लिए रेहन रख सकेंगे, अथवा ग्रामसभा को या ग्रामदान में शामिल किसी सदस्य परिवार को बेच सकेंगे।

३ इस जमीन का ब्योरा नीचे दिया है

गाँव का नाम जमीन का नम्बर रकबा

४ यह जमीन रेहन नही है / यह जमीन रेहन है। रेहन का ब्योरा नीचे दिया गया है

किसके पास रेहन है कितने रुपये के लिए रेहन है
सूद की दर कितना रुपया चुकाना शेष है . . .

५ मेरे ऊपर रेहन के सिवाय सरकार का और अन्य व्यक्तियो का कर्जा नही है/है।

इसका ब्योरा नीचे दिया है

कर्ज देनेवाले का नाम कर्ज की रकम

सूद की दर कितना रुपया चुकाना शेष है

दस्तखत

गवाह का नाम

१ (हस्ताक्षर)

२

नोट यदि जमीन की मालकियत का खाता सम्मिलित हो तो सभी खाते दारो के हस्ताक्षर होने चाहिए।

परिशिष्ट : ३

ग्रामदान-गोष्ठी में भाग लेनेवालों की सूची

उत्तर प्रदेश

१ श्री कपिलभाई
२ श्री सुन्दरलाल बहुगुणा
३ श्री रामवृक्ष शास्त्री
४ श्री लोकेन्द्रभाई
५ श्री देवतादीनभाई
६ श्री नन्दलालभाई
७ सुश्री कान्तिबाला

बिहार

८ श्री निर्मलचन्द्र
९ श्री रामश्रेष्ठ राय

असम

१० श्री रवीन्द्रनाथ उपाध्याय
११ श्री माणिकचन्द्र शाइकिया
१२ श्री चुन्नीभाई वैद्य
१३ श्री निरज बड़ा

उड़ीसा

१४ श्री मनमोहन चौधरी

आन्ध्रप्रदेश

१५ श्री वेंकट रामाराव

मद्रास

१६ श्री एस० जगन्नाथन्
१७ श्री वी० रामचन्द्रन्
१८ श्री के० एम० नटराजन्
१९ श्री आर० वरदन्

महाराष्ट्र

२० श्री रा० कृ० पाटिल
२१ श्री ठाकुरदास बंग
२२ श्री गो० रा० देशपाण्डे
२३ श्री मुरलीधर घाटे
२४ श्री नन्दलाल बाबरा
२५ श्री प्र० गा० शेंदुर्णीकर

गुजरात

२६ श्री हरिवल्लभ परीख
२७ श्री फरसनदास पाछार्णी
२८ श्री द्वारकादास जोशी
२९ श्री डा० जे० आर० दोषी

राजस्थान

३० श्री सिद्धराज ढड्ढा (गोष्ठी के अध्यक्ष)
३१ श्री पूर्णचन्द्र जैन
३२ श्री छोतरमल गोयल

मध्यप्रदेश

३३ सुश्री निर्मला वैद

३४ सुश्री निर्मला देशपाण्डे

३५ श्री महेन्द्रकुमार

३६ श्री नरेन्द्र दूबे

पंजाब

३७ श्री दयानिधि पटनायक

सर्व सेवा संघ, वाराणसी

३८ श्री जयप्रकाश नारायण

३९ श्री धीरेन्द्र मजूमदार

४० श्री दादा धर्माधिकारी

४१ श्री राधाकृष्ण

४२ श्री राममूर्ति

४३ श्री नारायण देसाई

४४ श्री कृष्णराज मेहता

४५ श्री प्रेमभाई

४६ श्री कृष्णकुमार

४७ श्री रामचन्द्र राही

गांधी विद्या संस्थान, वाराणसी

४८ श्री सुगतदास गुप्ता

४९ श्री बी० बी० चटर्जी

५० श्री एस० एस० अय्यर

ग्रामदान-साहित्य

सहजीवी गाँव इजराइल का एक प्रयोग	युसुफ बरातज	३ ००
मेरा गाँव	बबलभाई महेता	२ ५०
गाँव जाग उठा	(चित्रावली)	२ ००
कोरापुट में ग्राम विकास का प्रयोग	अण्णा सहस्रबुद्धे	२ ००
तमिलनाड के ग्रामदान	वसन्त व्यास	२ ००
कोरापुट में ग्रामदान	" "	२ ००
ग्रामदान निर्देशिका	रिपोर्ट	२ ००
धरती के गीत	दुखायल	१ ५०
सर्वोदय-संयोजन		१ ००
आंध्र के ग्रामदान	वसन्त व्यास	१ ००
मध्यप्रदेश का ग्रामदान मोहझरी	" "	१ ००
ग्रामदान शंका और समाधान	धीरेन्द्र मजूमदार	१ ००
धरतीमाता की गोद में	नारायण देसाई	० ७५
सर्वोदय विचार		० ७५
अकिली की कहानी	यदुनाथ थत्ते	० ६०
ग्राम-स्वराज्य	ठाकुरदास बंग	० ५६
ग्रामराज क्या ?	प्रो० गोरा	० ३७
अपना गाँव	ठाकुरदास बंग	० ३७
अपना राज्य		० ३७
सामूहिक प्रार्थना	श्रीकृष्णदत्त भट्ट	० ३०
खादी कार्यकर्ता और ग्रामदान		० ३०
गाँव का गोकुल	अप्पासाहब पटवर्धन	० २५
नगर-स्वराज्य	ठाकुरदास बंग	० २५
लोक राज्य	शंकरराव देव	० २५

ग्राम-स्वराज्य माला

ग्रामदान मार्गदर्शिका (भाग १)	मनमोहन चौधरी	० ५०
ग्राम-स्वराज्य का त्रिविध कार्यक्रम		० ५०
गाँव गाँव में अपना राज		० ५०
ग्रामदान क्या है ?		० ३५
शान्ति सेना क्या है ?		० ३५
गाँव की खादी		० २५

सर्व सेवा संघ प्रकाशन, राजघाट, वाराणसी